महावीर की जन्मभूमि

कुण्डपुर

लेखक-राजमल जैन

जदि पडदि दीवहत्थो अवडे किं कुणदि तस्स सो दीवो।
जदि सिक्खिऊण अणयं करेदि किं तस्स सिक्खफलं॥ मूल. 10,15

अर्थ-जिसके हाथ में दीपक है, वही पुरुष यदि कुए में गिर जाय, तो दीपक हाथ में लेने से क्या लाभ हुआ? इसी तरह ज्ञान प्राप्त करने पर भी मनुष्य यदि अन्याय का आचरण करे, तो उसके शास्त्र पढ़ने से क्या लाभ?

महावीर की जन्मभूमि

कुण्डपुर

ले. :- राजमल जैन

प्रकाशक :

भगवान महावीर स्मारक समिति

झेलम-पाटलीपुत्र पथ

राजेन्द्र नगर, पटना-16

प्रथम संस्करण :

वीर निर्माण संवत् 2529 ईस्वी सन् 2003

मूल्य :

चिंतन और सम्यक् निर्णय

मुद्रक :

शकुन प्रिन्टर्स, दिल्ली-110032

प्रकाशकीय

दिनांक 20-1-2003

धर्मानुरागी बन्धुओ

भगवान महावीर के जन्म स्थान को लेकर कुछ समय से विवाद उत्पन्न किए जा रहे हैं तथा कुछ विद्वत्‌जन सत्य को न स्वीकार करते हुए शब्दों के जाल से वस्तु स्थिति से भ्रमित करने में विशेष प्रयासरत हैं। वैसे तो जैन-अजैन शास्त्रों में अनेकानेक उल्लेख उपलब्ध हैं, शोधकर्ताओं ने भी बहुत गहन अध्ययन के बाद पुष्टि की है कि भगवान महावीर का जन्म विदेह स्थित कुण्डपुर नामक स्थान पर हुआ था, जो कि आज वैशाली के निकट मुजफ्फरपुर जिला में वासोकुण्ड नाम से स्थित है।

विद्वान लेखक श्री राजमल जैन ने भी महावीर की जन्मभूमि प्रकरण पर एक विद्वत्तापूर्ण आलेख उपलब्ध कराया है जो कि सभी वर्ग के लोगों का सही मार्गदर्शन एवं भ्रम दूर करेगा। ऐसी आशा से यह समिति सभी धर्मप्रेमी बन्धुओं को यह पुस्तक अर्पित कर रही है।

वर्तमान बिहार का क्षेत्र प्राचीन काल में विदेह मगध एवं अंग प्रदेश के सम्मिलित रूप में जाना जाता था, जो कि इतिहास-भूगोल-पुरातत्व सामग्री एवं शोधकर्ताओं द्वारा प्रमाणित है।

सत्य के शाश्वत रूप को मिटाना सम्भव नहीं है एवं सत्य की जानकारी क़िसी भी माध्यम से मिले स्वीकार करने में कोई शर्म की बात नहीं होनी चाहिए तथा सत्य की जानकारी विलम्ब से हुई हो, तो उसमें खेद न करते हुए त्रुटि सुधार करनी चाहिए।

"सत्य, सत्य है, जहाँ सत्य है,
उसमें नया पुराना क्या।
जब भी प्रकट सत्य स्थिति हो,
स्वीकृति से कतराना क्या।"

कैलाशचन्द्र जैन
मानद मंत्री
भगवान महावीर स्मारक समिति, पटना

प्राक्कथन

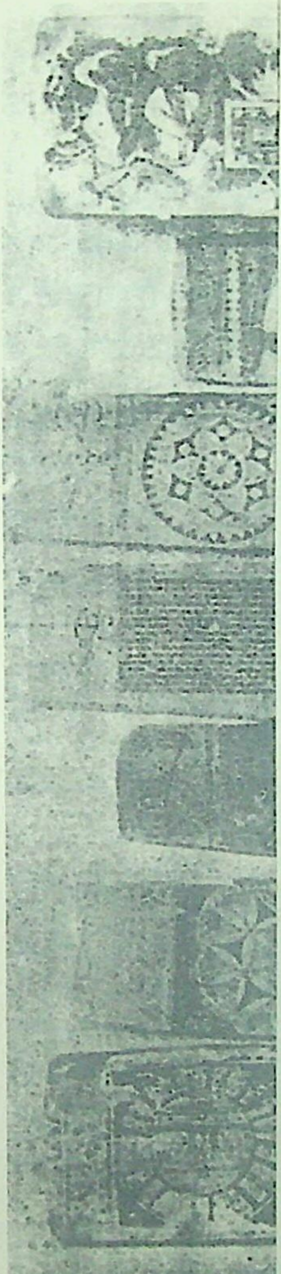
इस पुस्तिका में मैंने प्राकृत,संस्कृत और अपभ्रंश के पंद्रह प्राचीन दिगंबर जैन ग्रंथों से महावीर की वास्तविक जन्मभूमि संबंधी उल्लेख दिए हैं। संबंधित ग्रंथों का समय, आचार्य या महाकवि का नाम, प्राकृत या संबंधित भाषा से मूल उद्धरण, हिंदी में उसका ग्रंथ में दिया गया अनुवाद (एकाध जगह मुझे भी अनुवाद करना पड़ा), प्रकाशन संबंधी विवरण और आर्यिकाओं के मत पर विचार इसमें किया गया है।

मेरा आशय किसी का भी अपमान करने का नहीं है। यदि आर्यिकाओं को अनुचित लगे तो, वे क्षमा करें विशेष रूप से चंदनामतीजी वे मुझे शायद भूली नहीं होंगी। ज्ञानमति माताजी का तो विशेष योगदान है। उनसे विनम्र निवेदन है कि वे आगम प्रमाणों पर पुनः विचार करें और कुण्डपुर को महावीर की वास्तविक जन्मभूमि मान लें। वे समाज को सही नेतृत्व प्रदान करें।

विद्वान एवं मुनिगण भी विवाद को समाप्त कराने के लिए पूरा प्रयास करें। जैनधर्म की विरासत, वह भी अपने तीर्थंकर महावीर की जन्मभूमि को इतिहास से लुप्त नहीं होने दें।

मैंने किसी से धन लेकर यह लेख नहीं लिखा है।

वीर निर्वाण 2529, माघ सुदी 1 — राजमल जैन
जनवरी 3, ईस्वी 2003



चित्र परिचय

(कषायपाहुड़ से साभार गृहीत)

1 इस चित्र में सात ताड़पत्र हैं जिनमें से ऊपर से नीचे की ओर पहला, दूसरा और तीसरा ताड़पत्र श्रीधवलग्रंथराज का है तथा पांचवा ताड़पत्र श्रीधवलग्रंथराज का है, चौथा और छठा ताड़पत्र श्रीमहाधवल ग्रंथराज का है तथा पांचवां ताड़पत्र श्रीजयधवल ग्रंथ का है। इस पत्र के बीच में कनाडी का हस्तलेख तथा आजूबाजू चित्र हैं।

महावीर की जन्मभूमि

लेखक--राजमल जैन

महावीर के 2600वें जन्मवर्ष में भगवान के जन्म स्थान के संबंध में हस्तिनापुर की दो आर्यिकाओं गणिनी ज्ञानमतीजी एवं प्रज्ञाश्रमणी चंदनामतीजी ने पुस्तिका और फुटकर लेखों द्वारा इस बात पर बल दिया है कि नालंदा से लगभग दो किलोमीटर दूर स्थित कुंडलपुर ही महावीर की जन्मभूमि है। ये लेख हैं-ज्ञानमतीजी द्वारा लिखित "आगम के दर्पण में कुंडलपुर और वैशाली" तथा चंदनामतीजी के लेख "भगवान महावीर की जन्मभूमि कुंडलपुर एक वास्तविक तथ्य" तथा "बजी कुंडलपुर में बधाई, वैशाली कहाँ से आई ?" ये लेख "महावीर जन्मभूमि कुंडलपुर"--रचयित्री प्रज्ञाश्रमणी चंदनामती--नामक पुस्तिका में सम्मिलित हैं। अतः ज्ञानमतीजी के लेख को लेख क्रमांक 1 और चंदनामतीजी के लेखों को क्रमशः क्रमांक 2 और 3 इस समीक्षा में निर्दिष्ट किए जाएंगे।

प्रस्तुत लेखक ज्ञानमतीजी की इस मान्यता से सहमत है कि वर्तमान प्रश्न पर **आगम के अनुसार ही** विचार किया जाना चाहिए। उनका मत दिगंबर जैन आगम से है। ठीक भी है **किंतु**--(1) संदेह होने पर पूर्वाचार्यों के कथन को प्रामाणिक मानना चाहिए विशेषकर उन आचार्यों के अभिमत को प्रमाण मानना उचित होगा जो भगवान महावीर की परंपरा से सीधे जुड़े रहे थे तथा जिन्होंने उस परंपरा को स्वीकार कर कथन किया जैसे **कषायपाहुड़** के रचयिता **श्रुतधर गुणधराचार्य**। उन्होंने कषायपाहुड़ आर्यमंक्षु और नागहस्ति नामक मुनि शिष्यों को पढ़ाया था। उनसे तिलोयपण्णत्ति के कर्ता यतिवृषभ ने यह ज्ञान प्राप्त किया। इस प्रकार यतिवृषभ मूल कर्ता नहीं हैं। (2) दूसरे महान आचार्य **धरसेन** हुए जिन्होंने **महाकर्मप्रकृतिप्राभृत्** अर्थात् कर्मसंबंध के अपने गहरे विवेचन का ज्ञान पुष्पदंत और भूतबलि मुनियों को कराया। ये दोनों षट्खंडागम के रचयिता हैं किंतु गुरू से प्राप्त ज्ञान को संकलित करनेवाले आचार्य हैं।

षट्खंडागम की टीका धवला में विरोधी कथन एवं **संशय स्थल अथवा पूर्वापर** विरोध का भी विवेचन है। उसमें लिखा है कि आगम की रचना सूत्रों में है। **सूत्र वह है जो "थोड़े अक्षरों से संयुक्त हो,संदेहरहित हो, परमार्थ सहित हो, गूढ़ पदार्थों का निर्णय करनेवाला हो, युक्तियुक्त हो और यथार्थ हो, उसे पंडितजन सूत्र कहते हैं।" ध-9-4-1-54-117-259**

इसी टीका में और भी यह कहा गया है "प्रश्न-- सूत्र क्या है। उत्तर- जिसका गणधर देवों ने, प्रत्येक बुद्धों ने, श्रुतकेवलियों ने तथा अभिन्न दस पूर्वियों ने कथन किया हो वह सूत्र है। परंतु भूतबलि भट्टारक न गणधर हैं, न प्रत्येकबुद्ध हैं, न श्रुतकेवली हैं, न

अभिन्नदसपूर्वी हैं जिससे कि यह सूत्र हो सके।" (जिनेंद्रवर्णी कोश से उद्धृत) इस प्रकार तिलोयपण्णत्ति के कर्ता यतिवृषभ के कथन को प्रामाणिक नहीं माना जा सकता जिनकी प्रामाणिकता की घोषणा आर्यिकाओं ने पूरे जोर के साथ की है। उनके मत की और भी समीक्षा आगे की जाएगी ।

श्रुतधरों के बाद के आचार्य परंपरापोषक माने जाते हैं।

उपर्युक्त प्रकार के आचार्य और लब्धप्रतिष्ठ महाकवि प्राकृत, संस्कृत एवं अपभ्रंश में साक्ष्य के लिए इस समीक्षा में **कालक्रम** (Chronological Order) के अनुसार उद्धृत किए जावेंगे।

उपर्युक्त आर्यिकाओं को यह भी स्वीकार नहीं है कि श्वेतांबर ग्रंथों, बौद्ध साहित्य, एवं वेद-पुराण के उल्लेख तथा पाश्चात्य एवं आधुनिक जैन और जैनेतर विद्वानों द्वारा किए गए अनुसंधानों या उन्हें मान्यता देनेवाले विद्वानों के अभिमत भी मान्य किए जाएं।

बड़ी कठिन प्रतिज्ञा है। किंतु--

1 यह सभी जानते हैं कि भारत का इतिहास उपर्युक्त साधनों से ही मुख्य रूप से लिखा गया है। जैनधर्म भी इसका अपवाद नहीं है।

2 भगवान ऋषभदेव की ऐतिहासिकता ऋग्वेद और भागवत पुराण के आधार पर मुख्य रूप से स्वीकृत हुई है। यह तथ्य हस्तिनापुर के एक प्रकाशन में भी मान्य हुआ है।

3 श्वेतांबर और बौद्ध ग्रथों तथा जर्मन विद्वान् हरमन याकोबी के अनुसंधानों के आधार पर भगवान पार्श्वनाथ को ऐतिहासिक तीर्थंकर मान लिया गया है। यह तथ्य भी आर्यिकाओं को विदित ही होगा।

4 अपने एक लेख में आ. चंदनामतीजी ने यह बताया है कि उनके द्वारा महावीर स्वामी की जन्मभूमि के रूप मे मान्य कुंडलपुर में **अभिषेकपुष्करिणी** भी है। किंतु उन्होंने यह संदर्भ नहीं दिया कि ऐसा किस आगम ग्रंथ में लिखा है। वास्तव में, योगेंद्र मिश्र, राहुल सांकृत्यायन, जगदीशचंद्र माथुर आदि ने अथक परिश्रम कर यह निर्धारित किया है कि **वैशाली में** उक्त नाम का एक सरोवर था जिसमें स्नान करने के बाद ही वैशाली गणतंत्र के सदस्य संथागार (Parliament) में प्रशासनिक, आर्थिक एवं अन्य राज्यों से संबंध आदि प्रश्नों पर चर्चा एवं मतदान के लिए जाते थे। गौतम बुद्ध ने इस सभा को देवताओं (त्रायस्त्रिंश) की सभा कहा है। इसकी खुदाई में यह तथ्य सामने आया है कि इसके चारों ओर दीवार थी । उसमें केवल सदस्य ही स्नान कर सकते थे। यह पुष्करिणी जाल से ढ़की रहती थी और उसमें पक्षी भी चोंच नहीं मार सकता था। गरमी के दिनों में यह सरोवर सूख जाता है। वह बौना पोखर या बामन पोखर कहलाता है। उसकी ईंटों का नाप 15x9x2 इंच पाया गया है। लेखक ने **स्वयं** यह पुष्करिणी देखी है। पाठक देखें कि यह सूचना बौद्ध ग्रंथ में

उपलब्ध है और आर्यिका चंदनामतीजी ने शायद नहीं चाहते हुए भी उसका उपयोग किया है !

प्राचीन इतिहास की चर्चा में तत्कालीन शब्दों के अर्थ का ज्ञान अत्यंत आवश्यक होता है। उसके अभाव में गलत इतिहास की संभावना होती है। कुछ उदाहरण यहां दिए जाते हैं।

1 साहस का अर्थ किसी समय चोर, बलात्कारी होता था।

2 पाषंड का अर्थ धर्म था (अशोक के शिलालेख) किंतु आज वेदविरुद्ध आचरण या धार्मिक आडंबर या दिखावा होता है।

3 बुद्ध+उपासक से बुद्धुपासक बनता था मगर अब उसका केवल बुद्धू रह गया और अर्थ ......!!!

4 देवानांप्रिय अर्थात् देवताओं को भी प्रिय। यह उपाधि अशोक और **केरल के चेरवंशी राजाओं** ने धारण की थी मगर आज मूर्ख वाचक हो गई ।

5 लगभग 2600 वर्ष पूर्व वैशाली में **राजा** का जो अर्थ था, वह king के अर्थ में ले लिया गया है या सिद्धार्थ का शासन-प्रदेश वैशाली गणतंत्र की राजधानी के निकट होने से उसे छोटा बताकर सिद्धार्थ को जमींदार होने की कल्पना की गई है। अगर आप आगरा से झांसी की यात्रा करें, तो तीन राज्यों-उत्तरप्रदेश, राजस्थान और मध्यप्रदेश के भूभाग मार्ग में आवेंगे। क्या उन्हें देखकर इन राज्यों को छोटा कहना उचित होगा?

राजा शब्द का अर्थ बताया महावीर स्वामी के लगभग 100 वर्ष बाद हुए संस्कृत व्याकरण के महाप्राण पाणिनि ने--प्रसिद्ध विद्वान् वासुदेवशरण अग्रवाल ने दो महत्वपूर्ण पुस्तकें--पाणिनिकालीन भारत और पाणिनि परिचय[1] लिखी हैं। इनमें से अंतिम पुस्तक से वह सामग्री यहां देना उचित होगा जो उन्हें गणतंत्र, राजा, जनपद आदि के संबंध में पाणिनि की उक्त कृति से प्राप्त हुई है और जिसका इस समीक्षा के लिए महत्व है।

श्री अग्रवाल के निष्कर्ष निम्न प्रकार हैं--

"1 पाणिनि ने संघ को गण का पर्यायवाची भी कहा है। संघोद्धौ गण प्रशंसयोः--राजनैतिक अर्थ"

2 "प्राच्य देश में भी मिथिला से तराई प्रदेश तक सीमित भूभाग में कई छोटे-छोटे संघ राज्य थे। उनमें से केवल वृजि का नामोल्लेख पाणिनि ने किया है। मद्रवृज्योः कन्।"

3 "संघ शासन या गण में प्रभुसत्ता प्रधान क्षत्रियों के कुलों में निवास करती थी। प्रत्येक कुल का अधिपति **राजा** पदवी धारण करता था। लिच्छवि गण में 7707 कुल थे। उनमें से हरेक अपने को राजा मानता था। एकेक एवं मन्यते अहं राजेति। प्रत्येक कुल का समान अधिकार था। प्रभुसत्ताधारी कुलों के क्षत्रिय राजन्य भी कहलाते थे 4-1-137"

"वृजि बौद्ध साहित्य के **वज्जि** थे। उनके संघ में आठ अवान्तर जातियां थीं। उनमें **लिच्छवि और विदेह सबसे शक्तिशाली थे। वृजि गणराज्य की राजधानी वैशाली नगरी थी।"**

4 "बिहार प्रान्त में गंगा के उत्तर का प्रदेश वृजि कहलाता था जहां लिच्छवियों का राज्य था। गंगा के दक्षिण की ओर मगध नाम का जनपद था।"5 "पाणिनीय का प्रधान अंग जनपद विभाग था। जनपद में गांव और नगर दोनों ही होते थे। प्रत्येक जनपद में उसकी एक राजधानी थी। वही उस जनपद की शासन, संस्कृति और आर्थिक जीवन का प्रधान केंद्र होती थी। **प्रत्येक जनपद स्वतंत्र राज्य होता था।**"

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि संघ या गण में सम्मिलित जनपदों के शासक भी राजा की पदवी धारण करते थे और उनकी अपनी राजधानी भी होती थी।

गणराजा

प्राचीन शासन व्यवस्था के विशेषज्ञ श्री काशीप्रसाद जायसवाल[2] ने यह लिखा है "

The rulers (GANA RAJAS) underwent the ceremony of consecration by anointing." p.46

जब महावीर स्वामी का परिनिर्वाण हुआ, तब "मनुष्यों ने तथा देवों ने तीर्थंकर के निर्वाण का महान् उत्सव किया। हस्तिपाल राजा, मल्लगण के नायक तथा 18 गणनायकों ने मध्यमा पावा में परिनिर्वाणोत्सव भक्तिपूर्वक मनाया।"[3] अत्यंत प्राचीन माने जानेवाले कल्पसूत्र (कप्पसुत्त) में स्पष्ट कहा गया है "जं स्याणिं च समणे भगवं महावीरे कालगए जाव णव्व दुक्खप्पहीणे तं रयणिं च णं णव मल्लइ णव लेच्छइ कासी-कोसलगा अट्ठारसवि **गणरायाणो** अमावसिए पाराभोयं पोसहोववासं पट्ठविंसु गए से भावुज्जोए दव्वुज्जोअं करिस्समो।"

भावार्थ-जिस रात्रि में भगवान महावीर सब दुःखों से रहित होकर निर्वाण को प्राप्त हुए, उस रात्रि में नव मल्ल, नव लिच्छवि और काशी कोसल आदि प्रदेशों के अट्ठारह **गणराजाओं** ने एकत्र हो कर अमावस्या को प्रोषधोपवासपूर्वक निर्वाणपूजन की और यह कह कर कि "भावज्योति का अवसान हो गया और अब हम उसके स्थान पर द्रव्य ज्योति ज्योतित करें" दीपमाला प्रज्वलित की।[4]

उक्त तथ्यों को देखते हुए यह निष्कर्ष निकलता है कि सिद्धार्थ वास्तव में वैशाली संघ के एक गणराजा थे। गणतंत्र में **king** या राजा नहीं होता है। भारतीय गणतंत्र भी राजाओं को समाप्त कर बना है। हमारा गणतंत्र भी **Union of States** है। उसी प्रकार वैशाली संघ भी **Union of Republics like Vrijji, Western Videh (Mithila), Lichhvis, Mall etc.** से संघटित था। वैसे भी यदि कोई यह कहे कि सिद्धार्थ राजा **(monarch)** थे तो वह हंसी का पात्र होगा। जैन समाज को तो गर्व होना चाहिए कि *गणतंत्र ने भी एक तीर्थंकर को जन्म दिया।* इस गणतंत्र की विरासत के कारण भी उनके सिद्धांत सार्वजनीन और सार्वदेशिक हैं और आज भी उनकी गूंज हो रही है।

प्रस्तुत लेखक ने Internet पर एक लेख Son of the Mother of Parliaments लिखा है जो Communities.msn.co.in/Jainology by Rajmal Jain पर पढ़ा या डाउनलोड किया जा सकता है। स्मरण रहे कि कवि दिनकर ने वैशाली को **"प्रजातंत्र की माता"** कहा है।

निवेदन--कल्पसूत्र के उद्धरण का यह अर्थ नहीं लगाया जाए कि प्रस्तुत लेखक श्वेतांबर सिद्धांतो को मान्य करने का आग्रह कर रहा है। उसका उद्देश्य केवल ऐतिहासिक है कि राजा नहीं वास्तविक शब्द गणराजा था जो प्रयत्नलाघव या उच्चारण सुविधा (बोलने में कम प्रयत्न करना पड़े प्रयत्नलाघव कहलाता है ; प्रयत्नलाघव भाषाज्ञान का एक सिद्धांत है जिसे सारी दुनिया के भाषावैज्ञानिक मानते हैं) के कारण या दिगंबर लेखकों के और वैशाली गणतंत्र के बीच करीब सात सौ वर्षों के अंतराल के कारण राजा शब्द अशुद्ध अर्थ में चल पड़ा।

कितने गणराजा थे ?

इनकी संख्या ज्ञात करने का हमारे पास साधन तो नहीं है किंतु फिर भी एक अनुमान लगाया जा सकता है। महावीर स्वामी के परिनिर्वाण महोत्सव में अट्ठारह गणराजा सम्मिलित हुए थे। गणराजा सिद्धार्थ और वैशाली गणतंत्र के गणपति तो सम्मिलित नहीं हो सके थे (दिवंगत होने के कारण) । उन्हें शामिल कर बीस गणराजा तो माने ही जा सकते हैं।

एक प्रश्न है कि बौद्ध ग्रंथ ललितविस्तर का कथन है कि वैशाली संघ के सदस्यों की संख्या 7707 थी। समीप में ही शाक्य गणतंत्र था जिसमें गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था, उसके सदस्यों की संख्या केवल 500 थी। वह बुद्ध के जीवन काल में ही विजित हो गया था। इतना अंतर कैसे ? इस काव्य ने वैशाली गणतंत्र के सदस्यों की हंसी उड़ाई है। श्री

जायसवाल के अनुसार Parody की है, व्यंग्य किया है। यह काव्य गद्य और पद्य दोनों में है। हिंदी विश्वकोश के संकलनकर्ता श्री नगेंद्रनाथ बसु ने उसकी संस्कृत अशुद्ध भी बताई है और सूचना दी है कि इसे भोट लोग गाकर सुनाया करते थे। खेद की बात है कि अनेक लेखकों ने इसमें बताई संख्या पर विश्वास कर लिया है। उसका कथन और जायसवालजी का अंग्रेजी अनुवाद यहां दिया जा रहा है। "नोच्च-मध्य-वृद्ध ज्येष्ठानुपालिता, एकैक एवं मन्यते अहं राजा अहं राजेति । न च कस्यचिच्छिष्यत्वमुपगच्छति । अनुवाद- "amongst them (the Vaisalians) the rule of having respect for the high, the middle ones, the oldest, the elders is not observed: Every one considers himself to be the raja, I am the Raja, I am the Raja. No one becomes the follower of another. *Evidently in their council every member had equal right of speech and voting and every one to be the next president."*

Dr. Altekar[5] says "one Jatak states there were twice eighty four thousand nobles at Vaishali. Probably the total population of the ruling class was 1,68,000 and the assembly probably consisted of the heads of each consisting of about 20 persons."

इस प्रकार यह अनुभव होता है कि बौद्ध लेखकों ने वैशाली के साथ न्याय नहीं किया। कारण संभवतः जैन और बौद्ध धर्म में अच्छे संबंध नहीं रहे। लेखकों के लिए इस प्रकार के तथ्य उद्धृत करना उचित नहीं होगा। दिगंबर जैन पुराणों ने तो पूर्व भवों की कथा में आवश्यकता से अधिक रुचि दिखाई है। महावीर स्वामी के विहार का या वैशाली का विवरण भी नहीं के बराबर है। श्रेणिक और अभयकुमार ही उत्तरपुराण के मुख्य पात्र जान पड़ते हैं। हरिवंशपुराण ने अवश्य उन जनपदों के नाम गिनाए हैं--list दी है--जहां महावीर का विहार हुआ था।

ललितविस्तर और एक अन्य बौद्ध जातक के कथनों से जो कि गौतम बुद्ध के बाद के हैं, इतना निष्कर्ष तो निकाला ही जा सकता है कि वैशाली के निवासियों Vaisalians या जिन्हें उपर्युक्त व्यंग्य काव्य में "वसंतानाम्" कहा गया है, के प्रतिनिधियों की संख्या कम ही अर्थात् बुद्ध के छोटे शाक्य गणतंत्र की सदस्य संख्या 500 की तुलना में विस्तृत प्रदेशीय वैशाली गणतंत्र के जन प्रतिनिधियों की संख्या चार गुनी या 2000 मानी जा सकती है । यदि आप्टे का बृहद् अंग्रेजी संस्कृत कोश देखें, तो वसंत का एक अर्थ (In drama) A Nickname for the Vidushaka or buffoon दिया गया है। स्पष्ट है कि गाकर

लोगों का मनोरंजन करनेवाले भोट लोगों ने व्यंग्य किया है। इस विवेचन से यह स्पष्ट है कि *वैशाली में गणपति या अध्यक्ष पद तक पहुंचने के द्वार खुले थे।*

वैशाली में खुदाई

इस बात का भी खूब प्रचार किया गया है कि वैशाली में खुदाई नहीं हुई है । इसलिए उसकी तथा कुंडपुर की प्राचीनता में संदेह है । यह कथन करनेवालों के लिए इतना ही कहा जा सकता है कि यदि वे भारतीय पुरातत्व विभाग के प्रकाशनों एवं अन्य प्रमुख प्रकाशनों का अध्ययन कर लें, तो अच्छा होगा । इस प्रकार के कुछ प्रकाशन हैं :-

1 ANCIENT GEOGRAPHY OF INDIA by ALEXANDER CUNNINGHAM, pub. ARCHAEOLOGICAL SURVEY OF INDIA, NEW DELHI

2 ASI REPORT OF TOURS in NORTH and SOUTH BIHAR by A. CUNNINGHAM and H.B. W GARRICK. VOL.xvi and so on pub. ASI, NEW DELHI कनिंघम ने घूम-घूम कर प्राचीन भारत के स्थलों आदि का जो विवरण रिपोर्टों के रूप मे दिया था, वह लगभग 20 खंडों में है। भारतीय पुरातत्व विभाग से सूचना मिल सकती है। (शायद कोई जैन लेखक उनका अध्ययन करे)

3 वैशाली दिग्दर्शन--जगदीशचंद्र माथुर । इस पुस्तक में वैशाली के उत्खनन का संक्षिप्त विवरण मिल जाएगा। स्पूनर, ब्लाख, आदि पुरातत्वविदों द्वारा की गई खुदाई और लिए गए नाप की जानकारी प्राप्त हो सकेगी। श्री माथुर बिहार सरकार में शिक्षा सचिव थे।

4 काशीप्रसाद जायसवाल अनुसंधान संस्थान द्वारा करवाई गई खुदाई जो कि बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के ANCIENT INDIAN HISTORY AND CULTURE विभाग के अध्यक्ष डॉ. अल्तेकर की देखरेख में की गई थी। उसमें डॉ. हीरालाल जैन का भी सहयोग था ।

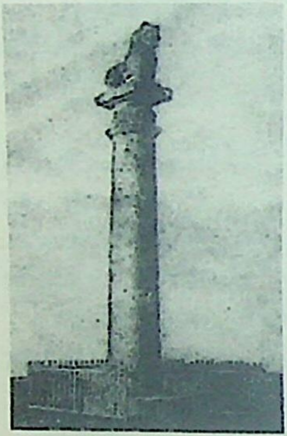
5 वैशाली संघ द्वारा भी सीमित साधनों मे करवाई गई खुदाई।

6 डॉ. योगेंद्र मिश्र की पुस्तक--An Early History of Vaishali तथा 'वैशाली' नामक हिंदी पुस्तक । (डॉ. मिश्रजी ने अपनी हिंदी पुस्तक लेखक को सन् 82 के लगभग भेंट करने की कृपा की थी किंतु वह जो गई सो गई, गई, गई ,गई ....! इस भेंट का प्रसंग आगे आना है इसलिए यह आत्मकथ्य)

वैशाली के कुछ पहिचान चिन्ह

1 वैशाली - शब्द विशाल से बना है- विशाल से विशाला (नगरी) और उससे वैशाली जो कि संस्कृत शब्द है। प्राकृत शब्द विसाली है जिसका उच्चारण वइसाली होता है। वह घिसते-घिसते बसाढ़ हो गया। वैशाली में एक गढ के अवशेष हैं जो राजा विशाल का गढ़ कहलाता है। इसका नाप लिया गया था। कनिंघम ने उसे उत्तर से दक्षिण की ओर 1580 फीट लंबा और 750 फीट चौडा बताया है। उसकी दीवारें अब नहीं हैं । उसकी प्राचीर और खाई हैं। किला जमीन से कुछ ऊपर ढेर के रूप में है। प्रस्तुत लेखक ने उस पर चढाई की थी ! !

2 अशोक ? स्तंभ-बसाढ से दो किलोमीटर कोल्हुआ (प्राचीन नाम कोल्लाग) ग्राम के निकट एक ही पत्थर से बना एक स्तंभ है जिसे गांववाले भीमसेन का पल्ला कहते हैं। भारी-भरकम के लिए भीम याद कर लिए जाते हैं ! अस्तु, यह स्तंभ बादामी रंग के बलुआ पत्थर का बना है। उसके माथे पर एक सिंह बैठा है - अन्य अशोक स्तंभों के सिंह सामने से खड़े दिखते हैं मानों अभी झपट पड़ेंगे। किंतु महावीर की जन्मभूमि का सिंह शांत बैठा है । स्तंभ पर कोई लेख नहीं है । कनिंघम साहब ने स्तंभ की जमीन के अंदर की गहराई में शंख लिपि में कुछ लिखा है ऐसा कहा है। पर क्या लिखा है यह उन्होंने नहीं बताया। हां, कुछ पर्यटकों ने अपने नाम उस पर खोद कर अमर कर दिए हैं । दोनों प्रकार के सिंहों की तुलना करने पर यह स्तंभ अशोक का नहीं हो सकता। यदि अशोक के शिलालेखों या राजाज्ञा लेखों (Edicts) की सूची देखी जाए, तो उसमें वैशाली के स्तंभ का नाम नहीं मिलेगा। चाहें तो प्रसिद्ध पुरातत्वविद डी.सी. सरकार की पुस्तक Inscriptions of ASOKA देख सकते हैं। उसे भारत सरकार के प्रकाशन विभाग ने प्रकाशित किया है। नाम खोदनेवालों का भी पूरा पता नहीं (पता नहीं छैनी हथौडा वे कहां से लाए होंगे) उसके आसपास तो लगभग 14 फीट गहरा गढ्ढा है । कनिंघम और नीचे नहीं खुदवा सके क्योंकि पानी निकल आया था। संसार सागर की तरह वे उसकी थाह नहीं ले सके ! उसका आधार 36 फीट लंबा और व्यास 4 फीट 4 इंच के लगभग है । उसके चारों ओर लोहे की सलाखों का घेरा है। ऊपर की सतह 5 फीट तक रेतीली है। प्रस्तुत लेखक तो डर ही गया कि कहीं रेत में धंस न जाऊं। अब बाकी रहे महावीर स्वामी । मुंह लटका कर उसके पास बैठ कर सोचने में आया कि **यह स्तंभ महावीर भगवान के सम्मान में निर्मित हुआ होगा।** नालंदा के निकट स्थित कुंडलपुर को महावीर स्वामी की जन्मभूमि बतलानेवाले लोग इस तथ्य पर गंभीरता से विचार करें ।



उत्तरपुराण के रचयिता आचार्य गुणभद्र भी यह सिंह प्रतीक नहीं भूले और लिख बैठे कि महावीर स्वामी ने मनःपर्यय ज्ञान होने पर **सिंह वृत्ति**[6] धारण कर ली थी । आचार्य का कथन है कि "शूरवीरता, अकेले रहना तथा वन में ही निवास करना इन तीन विशेषताओं से वे सिंह का अनुसरण करते थे।" क्या स्तंभ का सिंह इसी बात की सूचना नहीं दे रहा ? महावीर का सिंह तो चिंतन की मुद्रा में दिखता है। ऊपर जो चित्र दिया गया है, वह वैशाली दिग्दर्शन से साभार लिया गया है।

स्तंभ के पास ही एक तालाब है जिसे कुंड कहते हैं। गांव के लोग बताते हैं कि वैशाली में 52 पोखर या तालाब थे। अनेक सूख गए हैं ।

सिक्के- अशोक स्तंभ के पास ही सिक्कों का एक ढेर मिला था। ये सिक्के ईसा पूर्व 600 से लेकर 100 ईसा पूर्व तक के है । राजा विशाल के गढ़ से मिट्टी के सैंकड़ों सिक्के भी खुदाई में पाए गए हैं । चांदी और तांबे के सिक्के बीच में छेदवाले (punch marked) भी उपलब्ध हुए हैं। इनमें व्यापारी अपने विशेष चिन्ह लगाकर लेन-देन करते थे। प्रस्तुत लेखक के बाल्यकाल में कम से कम ग्वालियर रियासत में इसी प्रकार के छेदवाले कम मूल्य के सिक्के चला करते थे । अतः आश्चर्य की कोई बात नहीं ।

मुहरें

लगभग 12-15 मुहरें ऐसी पाई गई हैं जिन पर वैशाली का उल्लेख है। उदाहरण के तौर पर यहां दो मुहरें दी जाती हैं-

वैशाली नाम कुण्डे ,

वैशाल्याधिष्ठानाधिकरण

इसी प्रकार की और भी मुहरें हैं जो संग्रहालय में सुरक्षित रखी गई हैं। स्थानाभाव के कारण उनका विवरण यहां देना संभव नहीं है।

दरगाह- "भगवान का चरण"

गढ़ से थोड़ी दूर एक दरगाह है जो कि शेंख काजिन सुत्तारी की बताई जाती है। स्थानीय लोग इसे मीरन की दरगाह कहते है। वह भी खंडहर है। वहां "भगवान का चरण" ऐसा एक लेख नागरी लिपि में पाया गया है ।

एक महत्वपूर्ण बात यह है कि इस दरगाह के समीप चैत्र शुक्ल तेरस के दिन मेला लगता है जिसमें हजारों लोग सम्मिलित होते हैं। यह दिन महावीर स्वामी का जन्मदिन

है। इसमें बहुत अधिक संख्या जथरिया जाति के लोगों की होती है। इनका संबंध प्रसिद्ध विद्वान् राहुल सांकृत्यायन ने ज्ञातृ वंश से बताया है । व्युत्पत्ति इस प्रकार- ज्ञातृ से ज्ञातर से जातर से ज़तरिया से जथरिया से जेथरिया । महावीर के प्रति इन लोगों में बड़ी श्रद्धा है। राहुलजी ने इन लोगों को नीली आंखोंवाले बताया है और उन्हे अधिकतर पशुपालक कहा है।

स्वयं बौद्ध होते हुए भी राहुलजी ने लिखा है :-

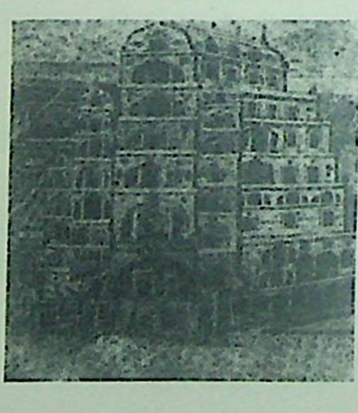
"वैशाली ही श्रमण महावीर की जन्मभूमि थी । यह कम आश्चर्य की बात नहीं है कि जैनों ने अपने तीर्थंकर की जन्मभूमि का नाम तक भुला दिया। ऐसा क्यों हुआ ? इसके लिए दो चार शताब्दी समारोह ऐसे होने चाहिए क्योंकि अब वज्जी भूमि और वैशाली में जैनों का कोई संपर्क नहीं रह गया था ।" यहां वैशाली से प्रदेश अभिप्रेत है, न कि नगरी।

ज्ञातृ शब्द से ही नाथ शब्द बना है । बौद्ध ग्रंथों में महावीर को **"निगण्ठ नाथपुत्त"** कहा गया है । ये शब्द निर्ग्रंथ ज्ञातपुत्र के प्राकृत रूप हैं। जैन धनंजय नाममाला में महावीर के नामों में "नाथान्वयो वर्धमानो " अर्थात् नाथ वंश में उत्पन्न वर्धमान नाम भी है।

राहुलजी के प्रति प्रस्तुत लेखक की श्रद्धा है । किंतु वैशाली में उनकी रुचि का एक प्रबल कारण भी है । वैशाली में गौतम बुद्ध ने 14 वर्षावास किए थे । महात्मा बुद्ध नें अपने निर्वाण से पूर्व अपने प्रिय शिष्य आनंद से कहा था कि बौद्ध संघ का संगठन वैशाली संघ के अनुरूप होना चाहिए । यह तथ्य 'महापरिनिव्वाणसुत्त ' में पढ़ा जा सकता है। भला राहुलजी वैशाली में रुचि क्यों नहीं लेते । श्वेतांबर कहते हैं कि महावीर ने बारह चौमासे वैशाली में किए थे। दिगंबर आचार्यों को शायद पता नहीं । महावीर अपनी जन्मभूमि को एकदम भूल नहीं गए होंगे ! वे अवश्य ही चातुर्मास के लिए वैशाली आए होंगे।

बौद्ध ग्रंथों के आधार पर यह तथ्य सामने आया है कि महावीर ने भी वैशाली में अनेक चातुर्मास किए थे। (देखिए तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परंपरा, भाग 1, लेखक डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री)

महावीर का सातमंजिला नंद्यावर्त महल



आचार्य गुणभद्र का कथन है कि महावीर के पिता का महल सात मंजिल का था (वर्धमान ने तो महल से मोह किया नहीं) प्रश्न उठता है कि उनके महल का क्या हुआ ? श्री जगदीशचंद्र माथुर ने 'वैशाली दिग्दर्शन' में लिखा है, "पुरातात्विक उत्खनन के फलस्वरूप यह निष्कर्ष निकलता है कि मौर्यकाल के पूर्व वैशाली

में ईंटों की सामग्री नहीं बनती थी । क्योंकि प्राङ्मौर्यकालीन जितने भी इमारतों के अवशेष मिले हैं, सभी मिट्टी के हैं। इससे अनुमान लगाया जाता है कि उन युगों में केवल मिट्टी, फूस और लकड़ियों के मकान बनते होंगे।" क्या सचमुच महावीर स्वामी का महल फूस, मिट्टी और लकड़ी का बना होगा । अरे नहीं , नहीं ।

डॉ. योगेंद्र मिश्रजी से सन 80-82 के बीच किसी समय भेंट के समय लेखक ने यही प्रश्न उठाया था कि सिद्धार्थ गणराजा के महल का क्या हुआ। फिर स्वयं ही यह समाधान उनके समक्ष रखा कि सिद्धार्थ का महल लकड़ी का था । इसके दो कारण हैं :-

(1) वैशाली के उत्तर में हिमालय है जहां लकड़ी की कोई कमी नहीं ।

(2) प्राचीन पाटलिपुत्र के आसपास भी लकड़ी का परकोटा था जिसके चिन्ह कभी-कभी मिल जाते हैं ।

अगर लेखक की स्मृति ठीक है, तो मिश्रजी ने सहमति प्रकट की थी । महल का चित्र मुनि विद्यानंदजी की पुस्तक 'तीर्थंकर वर्धमान'से साभार संक्षिप्त करके ग्रहीत है ।

महल के नष्ट होने का कारण ऐतिहासिक भी है। लगभग चौथी शताब्दी तक तो वैशाली गणतंत्र की स्थिति ठीक रही। हालांकि वह मगध के अधीन हो चुका था। उसके बाद वह बौद्ध, वैष्णव और मुस्लिम शासनों के अधीन होता चला गया । यह तो सभी जानते हैं कि शासकों के धर्म से भिन्न धर्मो को, उनके स्मारकों को कुछ न कुछ हानि पहुंचती है और सहिष्णुता का स्थान उन्माद ले लेता है ।

चीनी यात्री फाहियान ने जो सातवीं सदी में भारत आया था, लिखा है कि वैशाली में 'ब्रदर' यानी बौद्ध कम हैं और उनके धर्म के स्थान खंडहर हो गए हैं किंतु यहां पर निग्रंथ अर्थात् जैन लोग काफी हैं । इसके बाद वैशाली में जैनों के होने न होने का कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है ।

बारहवीं सदी से मुस्लिम आक्रमण तिरहुत प्रदेश पर जो अब विदेह क्षेत्र के स्थान पर तिरहुत या तीरभुक्ति अर्थात् नदियों के तटों पर बसा प्रदेश कहलाता था, प्रारंभ हो गए थे । लिच्छवि तो बहुत पहले ही नेपाल चले गए थे और वहां उन्होंने अपना राज्य स्थापित कर लिया था । वैशाली पाटलिपुत्र से नेपाल के व्यापार मार्ग में पड़ती थी । **अन्यधर्मियों द्वारा सताए जाने और अपना धर्म बचाने के लिए जैनी भाई भी दक्षिण बिहार नालंदा, पाटलिपुत्र आदि की ओर संभवतः भाग गए । <u>वैशाली जैनहीन हो गई ।</u>**

तिब्बती बौद्ध यात्री धर्मस्वामी बारहवीं सदी में वैशाली आया था। उसने लिखा है कि तुरुष्क सैनिकों के कारण वैशाली में हलचल मची हुई है। लोगों में अरक्षा की भावना है[1] वैशाली जल रही है ।

संभव है कि महावीर का लकड़ी का पैतृक महल 600 ईस्वी और 1200 के बीच आततायियों ने जला डाला ।

जैनों के भागने का एक और उदाहरण--कल्याण रास आदि के कवि मुनि विनयचंद के समय में ईस्वी 1196 में मुइजुद्दीन मुहम्मद गोरी ने तिहुवणगिरि (तहतगढ़-राज.) पर आक्रमण किया। मुसलमानी तवारीख ताजुआलम आसिर में लिखा है कि तिहुवणगिरि तहस-नहस हो गया था। वहां के सब हिंदू और जैन परिवार इधर-उधर भाग गये। वह वीरान हो गया।

महावीर की मूर्ति पोखर में मिली

महावीर के समय की अभिषेकपुष्करिणी आजकल खरौना पोखर या वामन पोखर कहलाती है। इस पोखर या तालाब से महावीर की काले पत्थर की एक मूर्ति मिली थी जो कुछ समय तक ब्राह्मणों ने अपने मंदिर में सुरक्षित रखी और यह पता चलने पर कि वह तो महावीर की मूर्ति है, जैनों को सहर्ष दे दी। जैन मंदिर में वह अब भी पूजी जाती है।

कुंडलपुर को महावीर की जन्मभूमि माननेवाले क्या यह बतला सकते हैं कि वहां उपर्युक्त प्रकार के कोई प्राचीन चिन्ह मिले हैं या उस स्थान का कोई इतिहास मिलता है जो उसे महावीर की जन्मभूमि सिद्ध कर सके? वहां केवल धर्मशाला के अंदर एक मंदिर है। वह अधिक से अधिक धर्मशाला जितना पुराना हो सकता है। उसमें पार्श्वनाथ की तीन प्रतिमाएं हैं जिनकी प्रतिष्ठा वैशाख सुदी 3 संवत् 1548 में हुई थी। जो महावीर स्वामी की प्रतिमा है, उसकी प्रतिष्ठा का आयोजन माघ शुक्ला 13 सोमवार संवत् 1982 में हुआ था। वैशाली छोडकर भागे जैनों ने कुंडलपुर को ही कुंडपुर मान लिया । यह उनकी भूल थी, ऐसी अनेक भूलें जैनों ने की हैं और कर रहे हैं। पढिए संक्षिप्त विवरण-

(1) कुंडलपुर (बड़गांव)

पहले कुंडलपुर की कुछ चर्चा । इस स्थान का नाम बड़गांव है। मंदिर गांव के बाहर है। वह नालंदा से केवल दो मील की दूरी पर है। भारतीय इतिहास को जाननेवाले इस तथ्य से सुपरिचित हैं कि नालंदा एक विशाल क्षेत्र में फैला बौद्ध विश्वविद्यालय था । वहां देश-विदेश के छात्र एवं बौद्ध भिक्षु अध्ययन के लिए आते थे। इस शिक्षा केंद्र के साथ ही अनेक बौद्ध मंदिर या विहार भी थे। शिक्षार्थियों के लिए अनेक छात्रावास भी थे । इन ही विहारों और छात्रावासों के खंडहर बड़गांव या कुंडलपुर के आसपास पाए गए हैं।

बताया जाता है कि ब्राह्मणों ने इस स्थान का नाम कुंडलपुर रख लिया था । उनका मत था कि इसी स्थान से कृष्ण के साथ रुक्मिणी छिपकर चली गई थी। किंतु वे यह भूल गए कि रुक्मिणी को वैदर्भी अर्थात् विदर्भ की निवासिनी वैष्णव पुराणों में कहा गया है। विदर्भ अब महाराष्ट्र में है। वरदा (वर्धा) नदी के किनारे रुक्मिणी का जन्मस्थान कुंडलपुर है जो आज भी कुंडलपुर ही कहलाता है । **ब्राह्मण भी वास्तविक कुंडलपुर को शायद भूल गए ।**

जैनी भी कुंडलपुर को महावीर की जन्मभूमि मान बैठे। इसके ऐतिहासिक कारणों की चर्चा ऊपर की जा चुकी है।

जैनियों की यह संभवतः पहली भूल है।

(2) कितनी बेतुकी बात है कि कुंडलपुर को महावीर का जन्मस्थान मानने पर यह स्वीकार करना पड़ेगा कि गणराजा सिद्धार्थ वहां राज्य करते थे और वे श्रेणिक बिंबसार के अधीन थे । श्रेणिक की राजधानी वर्तमान कुंडलपुर से 20-22 मील दूर ही है। यदि कुंडलपुर भगवान का जन्म स्थान है, तो गणपति चेटक को कहां फिट किया जाएगा ? जो राजा श्रेणिक भगवान का प्रधान श्रोता एवं भक्त था, वह महावीर के पिता का बॉस ! सिद्धार्थ उसे सलाम करते होंगे ! !

ऐसा लगता है कि आ. चंदनामतीजी ने इसका भी हल निकाल लिया है । उनका कथन है कि संपूर्ण बिहार ही विदेह क्षेत्र है ! पता नहीं, उन्होंने कौन-सी प्राचीन या नवीन भूगोल या इतिहास पुस्तक से या दिगंबर जैन ग्रंथ से यह उल्लेख ढूंढ़ निकाला !

तथ्य यह है कि महावीर स्वामी के युग में बिहार नाम का कोई प्रदेश ही नहीं था। उत्तरी बिहार में पूर्व विदेह (वैशाली क्षेत्र) और पश्चिम विदेह (मिथिला क्षेत्र) थे । उसके आगे बंग जनपद था । विदेह क्षेत्र के पश्चिम में राजा श्रेणिक का साम्राज्य था जो अंग जनपद (मंदारगिरि भागलपुर क्षेत्र) तक विस्तृत था । वैशाली जनपद के नीचे दक्षिण में कोसल और काशी जनपद थे।

सातवीं सदी में बिहार नाम का एक स्थान था जहां एक बौद्ध विहार था। कनिंघम ने लिखा है, "In our maps, the name is spelt *Behar* but by the people it is written and pronounced *Bihar* which is sufficient to show that it must once have been the site of some famous Buddhist *Vihar*."

विदेह क्षेत्र के नीचे का भाग कोसल और काशी जनपदों के नाम से विख्यात था बिहार नाम तो अंग्रजों की देन बताया जाता है।

प्राचीन भूगोल या इतिहास की चर्चा भी बड़ी सावधानी से करने की आवश्यकता होती है।

कुछ तथाकथित विद्वानों का मत है कि तीर्थंकर के पिता तो बड़े राजा या चक्रवर्ती होते हैं । नक्शे में बसाढ़ (वैशाली का आजकल प्रचलित नाम) के पास जो कुण्डपुर (आजकल वासोकुण्ड) दिखता है, वह तो छोटा प्रदेश मालूम होता है । वाह जी वाह ! वह महावीर के पिता का राज्य नहीं हो सकता। सिद्धार्थ का राज्य (जनपद) छोटा है, यह उन्हें अभीष्ट नहीं है। इस तर्क के आधार पर तो हरियाणा और पंजाब दो-तीन मील में फैले छोटे-छोटे राज्य ही मानना चाहिए । वे विद्वान् यह अवश्य जानते होंगे कि केवल ऋषभदेव ही समस्त भारत के राजा थे । उनके बाद केवल पांच तीर्थंकर चक्रवर्ती हुए । उनके पिता भी चक्रवर्ती थे ऐसा उल्लेख शायद नहीं है । चौबीस तीर्थंकरों के पिता के नाम यहां क्रमशः दिए जाते हैं:- 1 नाभिराय, 2 जितशत्रु, 3 दृढराज्य (जितारि), 4 स्वयंवर (संवर), 5 मेघरथ (मेघप्रभ), 6 धरण, 7 सुप्रतिष्ठ, 8 महासेन, 9 सुग्रीव, 10 दृढरथ, 11 विष्णु, 12 वसुपूज्य, 13 कृतवर्मा, 14 सिंहसेन, 15 भानु (भानुराज), 16 विश्वसेन, 17 सूरसेन (सूर्य), 18 सुदर्शन, 19 कुम्भ, 20 सुमित्र, 21 विजय, 22 समुद्रविजय, 23 विश्वसेन (अश्वसेन), और 24 सिद्धार्थ ।

उपर्युक्त नामों की तुलना यदि चक्रवर्तियों के नामों से की जाए, तो परिणम आप स्वयं ही निकालें । बारह चक्रवर्तियों के नाम इस प्रकार हैं:- 1भरत 2 सगर 3 मघवा 4 सनत्कुमार 5 6 और 7 स्वयं 8 सुभौम 9 पद्म 10 हरिषेण 11 जयसेन 12 ब्रह्मदत्त। इनमें से एक भी किसी तीर्थंकर के पिता नहीं थे। (यह जानकारी जिनेंद्र वर्णी कोश से ली गई है।)

महावीर के समय में वैशाली एक समृद्ध और शक्तिशाली गणतंत्र था और उसने महावीर जैसे युग प्रवर्तक को जन्म दिया जिसकी जयजयकार आज भी होती है और जिसके सिद्धांतों की प्रासंगिकता अनेकशः अनुभव की जा रही है।

वैशाली गणतंत्र विश्व का कम से कम 2700 वर्ष प्राचीन गणतंत्र था जिसकी शासन पद्धति, संथागार विधि, मतदान, सात स्तरों पर विचार के बाद ही दंड या न्याय का अधिक विवरण मिलता है। ऐसे जनतंत्र में महावीर जन्में थे। उपर्युक्त इतिहास और भूगोल संबंधी भ्रांत धारणाएं जैनियों की दूसरी भूल है जिसे सुधार लेने की अत्यंत आवश्यकता है ।

(3) सोनागिर की कहानी भी कुण्डपुर की तरह हैः-पढ़िए नाथूराम प्रेमीजी[8] के शब्दों में-

कुंडलपुर (नालंदा के समीप) की चर्चा करते हुए उनका कथन है "भगवान महावीर का जन्म स्थान कुंडग्राम है जो वर्तमान में बिहार के मुजफ्फरपुर जिले का बसाढ़ ग्राम है। वही वैशाली है और उसी का एक मुहल्ला कुंडग्राम था। जिस तरह राजगृह के समीप की पांच पहाड़ियों में से एक का नाम श्रमणगिरि है और वह धीरे-धीरे सुवर्णगिरि सोवण्णगिरि

होते-होते सोनागिर होगया और अंत में **मूल स्थान के भूल जाने पर** बुंदेलखंड के सोनागिर को ही सिद्धक्षेत्र बनने का सौभाग्य प्राप्त हो गया और अंत में दमोह के पास का कुंडलपुर महावीर का जन्मस्थान बना दिया गया।"

"बीच में **अनेक तीर्थों को लोग भूल गए** और उनके स्थान में मठपति भट्टारकों ने अपनी सूझबूझ के अनुसार नये नये तीर्थ स्थपित किए और उन्हीं को पुराने तीर्थों के रूप में प्रचारित किया।" (पृ 450 और 451)

जैनियों की यह तीसरी भूल है।

(4) समयसार पर प्रसिद्ध टीका 'अध्यात्म अमृत कलश'की चर्चा करते हुए पंडित कैलाशचंद्रजी ने लिखा है "कुंदकुंद की 1000 वर्षों तक किसी ने सुध नहीं ली।" यह **चौथी** भूल है।

(5) षट्खंडागम की रचना धरसेनाचार्य (महावीर निर्वाण संवतृ 614 के बाद हुए हैं) के शिष्य पुष्पदंत और भूतबलि ने की थी किंतु किन्ही कारणें से यह अनन्य रचना पत्थर की पेटी में बंद हो गई । उसका वास्तविक उद्धार किया डॉ . हीरालालजी ने जो कुछ वर्ष पूर्व दिवंगत हुए हैं। भूल किसी से भी हुई हो, वह जैन समाज की **पांचवी भूल** है।

आधुनिक भूलें

दिगंबर जैन समाज की भूलों का सिलसिला अभी समाप्त नहीं हुआ है। कुछ विद्वानों के परामर्श से नए तीर्थों की कायमी और पुराने तीर्थ का स्थानांतरण किया जा रहा है। पुराने तीर्थ का स्थानांतरण तो वैशाली स्थित कुंडपुर ही है।

(6)भगवान ऋषभदेव का निर्वाण कैलास पर्वत पर हुआ था। यह मान्यता युगो से चली आ रही है। किंतु कुछ उत्साही लोग कैलास को बद्रीनाथ क्षेत्र में ले आए हैं। इसका कारण अष्टापद और कैलास को एक ही मानने तथा दूसरा कारण कैलास अब तिब्बत में होने से चीन की अधीनता में आ जाने के कारण उसकी यात्रा मुक्त रूप से संभव नहीं हो सकना जान पड़ता है। दूसरे कारण से कैलास को बद्रीनाथ क्षेत्र में मानना तो सर्वथा अनुचित है। (इस लेख में लेखक ने कैलास का ही प्रयोग किया है। **यही नाम पुराणसम्मत है।)**

कैलास और अष्टापद को एक ही मानने संबंधी भ्रांति हमारे आचार्यों के कारण भी हुई है। इस संबंध में बलभद्रजी ने ऐसे आचार्यों के उद्धरण 'भारत के दिगंबर जैन तीर्थ भाग एक' में दिए हैं। वे लिख बैठे कि अष्टापद, कैलाश और धवलगिरि ये सब समानार्थक और पर्यायवाची हैं। (पृष्ठ 89) फिर भी वे संतुष्ट नहीं हुए तो कहा, "अष्टापद और कैलाश हिमवान् और हिमालय के नामान्तर मात्र हैं। " हिमालय कहने से तो कैलास प्रदेश का

विस्तार बहुत अधिक होगया। शायद इसीलिए उन्होंने आगे लिखा "इस मान्यता को स्वीकार कर लेने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि कैलाश या अष्टापद कहने पर हिमालय में भागीरथी, अलकनंदा और गगा के तटवर्ती बदरीनाथ आदि से लेकर कैलाश नामक पर्वत तक का समस्त प्रदेश आ जाता है। इसमें आजकल के ऋषिकेश, जोशीमठ, बदरीनाथ, गंगोत्री, जमनोत्री और मुख्य कैलाश सम्मिलित हैं। यह प्रदेश अष्टापद भी कहलाता था। क्योंकि इस प्रदेश में पर्वतों की जो श्रंखला फैली हुई है उसके बड़-बड़े और मुख्य आठ पद हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं-कैलाश, गौरीशंकर, द्रोणिगिरि, नन्दा, नर, नारायण, बदरीनाथ और त्रिशूली।" अब और मुसीबत! कोई अगर ऋषिकेश हो आए, तो वह घमंडपूर्वक कह सकता है कि मैं तो बद्रीनाथ क्षेत्र में हो आया।

इसके अतिरिक्त बलभद्रजी ने यहां तक लिख दिया कि बद्रीनाथ का मंदिर भरत द्वारा कैलाश पर बनवाए गए 84 स्वर्ण मंदिरों में से एक है। कोई भी जान सकता है कि यह एक ऐतिहासिक कालदोष (error of time) है।

एक और बात उलझन पैदा करती है। वैष्णव भागवत पुराण कहता है कि नाभिराय और मरुदेवी ने बद्रीनाथ क्षेत्र में तपस्या की थी और वहीं उनका निर्वाण भी हुआ था, तो क्या ऋषभदेव का निर्वाणक्षेत्र भी यहीं है? **कितनी विसंगति होगी !**

अब देखते हैं कि पुराण क्या कहते है ?

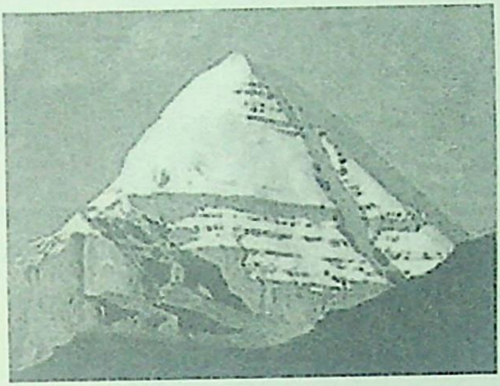
प्रथम जिनसेनाचार्य (आठवीं सदी) हरिवंशपुराण में कहते है कि स्फटिक मणि की शिलाओं से रमणीय उस **कैलास** पर्वत पर आरूढ़ हो कर भगवान ने एक हजार राजाओं के साथ योग निरोध किया .....12/20, 19/67 (यहां केवल अनुवाद दिया गया है ।)

जिनसेनाचार्य द्वितीय (नौवीं शताब्दी) ने आदिपुराण में मुख्य रूप से कैलास और अष्टापद दोनों का प्रयोग किया है किंतु अष्टापद के संबंध में रोचक बातें लिखी हैं। इस पुराण के श्लोक 33/11-12-14, 34/1, 36/203 पर कैलास शब्द का ही प्रयोग है।

अपनी दिग्विजय के अवसर पर भरत चक्रवर्ती कैलास की शोभा देख रहे हैं। वहां "इधर ये अष्टापद, गरजते हुए मेघों के समूह को हाथी समझकर उन पर उछलते हैं किंतु फिर नीचे गिर कर शोचनीय दशा को प्राप्त हो रहे हैं।" 33-44। भरत का मंत्री उन्हें बताता है कि "सार्थक नाम को धारण करनेवाले अष्टापद नाम के जीवों से सेवित हुआ यह पर्वत आपके चढ़ने के बाद अष्टापद नाम को प्राप्त होगा।" 33/56 । कैलास पर्वत के रंग के संबंध में कहा गया है, "कहीं पर पद्मराग मणियों की किरणों से मिले हुए स्फटिक मणियों की किरणों से जिसके किनारे का समीप का भाग कुछ-कुछ लाली लिए हुए सफेद रंग का होगया है इसलिए जो ऐसा जान पड़ता है मानों उसे किलास (कुष्ठ) रोग ही हो गया हो।" 33/23 आगे आचार्यजी ने दाद रोग से भी चट्टानों की तुलना कर डाली है।

अष्टापद का अर्थ है- आठ पैरोंवाला । इस प्रकार के जंतु को Octopus कहते हैं। उसके आठ पैर होते हैं।

कैलास के संदर्भ में अष्टापद से आठ चोटियोंवाला पर्वत लेना उचित होगा जिनके नाम बलभद्रजी ने ऊपर गिनाए हैं । उनमें एक नाम कैलास भी है। इसलिए कैलास को और अष्टापद को एक ही मानना ठीक नहीं है। कैलास से गंगा और सिंध नदियां निकलती हैं। बद्रीनाथ क्षेत्र से नहीं। अत: कैलास को उसकी उच्च स्थिति पर ही रहने दें।



इंटरनेट पर यदि कोई कैलास का चित्र देखे तो यह तथ्य सामने आएगा कि उसका आकार एक पिरामिड जैसा है जिसे लिंगाकार भी कहते हैं। इस चित्र में ऊपर से नीचे तक आती अलकनंदा (गंगा) की धारा नीचे तक आती हुई दिखाई देगी। बद्रीनाथ क्षेत्र से नदियां नहीं निकलती हैं। यह दृश्य भी नहीं। इस चित्र में सभी चोटियां नहीं आ सकी हैं।

आचार्य ने यह भी लिखा है कि कैलास की यात्रा चौथे काल में विद्याधरों द्वारा विमानों की सहायता से की जाती थी। शायद इसी कारण पंचम काल के लोगों का उत्साह ठंडा पड़ गया। किंतु भूटान के एक जैन यात्री लामचीदास ने करीब दो सौ वर्ष पूर्व कैलास और चीन आदि देशों में जैन मंदिरों की यात्रा की थी। उसका विवरण छपा है। कैलास यात्रा में वह एक ऐसी जगह फंस गया कि आगे नहीं जा सकता था । उस समय वहां एक आदमी आया और लामचीदास से बोला, तू यहां मरने क्यों चला आया। यात्री ने कहा, चाहे मर जाऊ , कैलास जरूर जाऊंगा। आदमी ने उसे पार लगा दिया और गायब हो गया। कैलास की यात्रा अब भी भारत और चीन की सहायता से की जा सकती है। नेपाल की ओर से भी किंतु संभल के -- दो सरकारों तथा भारत सरकार से भी अनुमति लेनी होगी। संभल के कदम उठाना। कैलास को बद्रीनाथ क्षेत्र में घसीट लाना कदापि उचित नहीं।

ऋषभदेव का निर्वाण स्थान गड़बड़ ! महावीर स्वामी की जन्मभूमि भी गड़बड़ !!! वाह जैनी भाई वाह !

निष्कर्ष यही प्रतीत होता है कि भगवान ऋषभदेव का निर्वाण स्थान कैलास ही रहेगा चाहे वह भारत के अधीन रहा हो या चीन के अधिकार में चला गया हो। चीन के अधीन तिब्बत के लोग कैलास को भी अत्यंत पवित्र मानते हैं। वे दंडवत् उसकी यात्रा करते हैं । बद्रीनाथ= कैलास यह छठी भूल है।

(7) बडे खेद की बात है कि विदुषी ज्ञानमतीजी ने कैलास का एक चित्र प्रकाशित कर उसका प्रचार किया है। कितु उसकी वर्तनी (spelling) **कैलाश** छपवाई है जो कि हरिवंशपुराण और आदिपुराण के अनुरूप नहीं है। कैलास संबंधी इन दोनों पुराणों के संदर्भ ऊपर दिए हैं। कोई भी मिलाकर देखले। शिवपुराण भी कैलास को ही शिव का निवास मानता है।

इसके अतिरिक्त ऋषभदेव तो prominently दिखाई नहीं देते हैं किंतु आर्यिका ज्ञानमतीजी और आ. चंदनामतीजी एवं मोतीसागरजी को कैलास के चित्र के मध्य भाग से कुछ **ऊपर** खड़ी हुई मुद्रा में देखा जा सकता है। कैलास पर इनके प्रदर्शन का प्रयोजन पाठक स्वयं ही समझ लें। यह एक गलत परंपरा का कारण हो सकता है। आर्यिका ज्ञानमतीजी द्वारा प्रकाशित कैलास का चित्र अगले पृष्ठ पर देखें।

सम्मेदशिखर या गिरनारजी के चित्रों में इस प्रकार त्यागी लोगों के अन्तर्निविष्ट (Inset) चित्र अभी तक तो देखने में नहीं आए। पाठक स्वयं अनुमान कर सकते हैं कि आर्यिकाओं का उद्देश्य क्या है? यह सातवीं भूल होगी।



पंडित कैलासचंद्रजी" ने बड़े मार्मिक शब्दों में लिखा है,"दि.जैन समाज में एक वर्ग ऐसा है जो अपने में ही मग्न रहता है और विश्व में क्या होता है, इसे देखकर भी नहीं देखता । " यह बात पंडितजी ने साहित्य की उपेक्षा को देखकर लिखी है और आशा प्रकट की है किं नए लेखक विदेशों में भी जैनधर्म संबंधी लेख लिखेंगे। प्रस्तुत लेखक लेखकों से यह अनुरोध भी करता है कि वे वास्तु के नाम पर जैन मंदिरों के पुरातत्व का हनन न करने दें तथा **महावीर की जन्मभूमि के संबंध में भ्रामक प्रचार करनेवालों का साथ नहीं दें। मुनि भी उनका साथ न दें।**

खेद की बात है कि कुछ लोग वास्तु, भट्टारक प्रथा समाप्त करने आदि की बातें उछालते हैं। मंदिरों को तुड़वाना आसान हो सकता है मगर ऐसे लोग 8-10 ऐसे घर तुड़वाकर देखें जो वास्तु के विरुद्ध बने हों। अगर भट्टारक नहीं होते, तो श्रवणबेलगोल की मूर्ति अन्य किसी देवता की बन गई होती और दिल्ली का लाल मंदिर अस्तित्व में नहीं

आता। यह मंदिर शाहजहां के समय में सन् 1656 में बना था। शाही फौज का एक जैन अफसर टेन्ट में प्रतिमा रख कर दर्शन करता था। उसके यहां अन्य जैन फौजी भी आने लगे। बादशाह ने प्रसन्न हो कर ठीक लाल किले के सामने जमीन दे दी किंतु उसके बेटे औरंगजेब ने बाजे बजाने की मनाही कर दी। बाजे बजते रहे हालांकि बजानेवाला कोई नहीं होता था। औरंगजेब ने अफसरों से रिपोर्ट मांगी। जब उन्होंने वही रिपोर्ट दी, तो वह खुद मुआयना करने पहुंचा। हैरान रहने पर उसने अपना हुक्म वापस ले लिया। भट्टारकीय एवं अन्य चमत्कारों के कारण मंदिर प्रसिद्ध हो गया। आज भी 15 अगस्त के दिन प्रधान मंत्री के भाषण के अवसर पर सर्वधर्म समभाव के प्रतीक के रूप में यह मंदिर प्रतिवर्ष दिखाया जाता है।

क्या कुंडलपुर को महावीर का जन्म स्थान बतानेवाले इस प्रकार का कोई चमत्कार कुंडलपुर में बता सकते है? यदि दुष्प्रचार सफल हुआ, तो महावीर की वास्तविक जन्मभूमि कुण्डपुर जैन इतिहास से लुप्त हो कर केवल गौतम बुद्ध से ही संबंधित रह जाएगी। भ्रम पैदा करनेवालों से सावधान ।

चोटी के विद्वानों के मतों के संबंध में भ्रामक कथन

(1) पंडित बलभद्रजी ने चार भागों में दि. जैन तीर्थों का विद्वत्तापूर्ण इतिहास लिखा है। (पांचवा भाग - कर्नाटक -प्रस्तुत लेखक ने लिखा है।) बलभद्रजी ने भाग 3 में वैशाली संबंधी विस्तृत प्रमाणादि का वर्णन पृ 21 से लेकर 41 तक किया है।इन 21 पृष्ठों में उन्होंने अनेक प्रमाणों द्वारा यही प्रतिपादित किया है कि वास्तव में कुण्डपुर ही महावीर की जन्मभूमि है । पृष्ठ 39 पर "महावीर की जन्मभूमि के संबंध में भ्रान्ति" शीर्षक से उन्होंने लिखा है "भगवान महावीर वैशाली संघ के कुण्डपुर में उत्पन्न हुए थे यह ऊपर अनेक प्रमाणों द्वारा सिद्ध किया जा चुका है।"

उन परिस्थितियों की चर्चा करते हुए जिनमें वैशाली वीरान या जैनों से रहित हो गई, बलभद्रजी ने स्पष्ट लिखा है, "श्रावस्ती से पाटलिपुत्र को जो व्यापार मार्ग था, उसी पर वैशाली अवस्थित थी। इन नगरों के विनाश का अर्थ है- इन व्यापारिक केन्द्रों का विनाश हो गया या किया गया। संभवतः इन्हीं परिस्थितियों में जैन लोग वैशाली को छोड़ गये। कुछ समय बाद वे भगवान महावीर की जन्मभूमि को भूल गये, वहां आना-जाना भी बन्द हो गया और नये स्थानों पर पुराने नाम से नए तीर्थ की स्थापना हो गयी।"

"दिगम्बर संप्रदाय में नए तीर्थ का नाम 'कुण्डलपुर' रख लिया गया। इस भूल भ्रान्ति को साहित्यिक समर्थन भी मिल गया जिससे भ्रान्ति के परिमार्जन की आवश्यकता का अनुभव नहीं हो सका। बौद्ध, श्वेतांबर और दिगंबर सम्पूर्ण साहित्य में महावीर की जन्म नगरी का नाम सर्वत्र कुण्डपुर (अथवा कुण्डग्राम, क्षत्रियकुण्ड) ही मिलता है।" (आगे

पंडितजी ने तिलोयपण्णत्ति और षट्खंडागम के उद्धरण दिए हैं जिनकी समीक्षा प्रस्तुत लेखक द्वारा इसी निबंध में की जाएगी)

अपने उपसंहार में बलभद्रजी ने अपनी सम्मति इस प्रकार व्यक्त की है "इस प्रकार प्राचीन आर्ष ग्रंथों में कुण्डलपुर का उल्लेख नालन्दा के निकटवर्ती कुण्डलपुर को महावीर की जन्मभूमि मानने में एक प्रमाण बन गया। किन्तु हमारा विश्वास है, आचार्य यतिवृषभ और आचार्य वीरसेन का कुण्डलपुर लिखने का आशय उसी कुण्डपुर से है, जो वस्तुतः महावीर की जन्मभूमि है।"

पाठक स्वयं देख सकते हैं कि बलभद्रजी ने पूरे विवेचन में इसी बात पर जोर दिया है कि महावीर की जन्मभूमि वास्तव में कुण्डपुर ही है। खेद है कि आ.चंदनामतीजी ने बलभद्रजी के मन्तव्य के संबंध में जो कथन किया है, वह भ्रामक है। वास्तविक तथ्य उन्होंने पाठकों की दृष्टि से ओझल करने का प्रयत्न किया है।

(2) स्वर्गीय पं. **कैलाशचंद्रजी** पुष्ट प्रमाणों सहित जैनधर्म के इतिहास के सर्वप्रथम लेखक, प्राचीन जैन साहित्य की गवेषणा आदि के प्रामाणिक साहित्यकार और प्राचीन ग्रंथों के यशस्वी संपादक रहे हैं। उन्होंने सर्वसाधारण या आम लोगों के लिए **जैनधर्म** नामक पुस्तक लिखी है जो आज भी लोकप्रिय है।

आ. चंदनामतीजी ने इस पुस्तक के पृ 18 (पृ 28?)पर पंडितजी की निम्न पंक्तियां अपने लेख क्र. 3/40 पर उद्धृत की हैं "भगवान महावीर अन्तिम तीर्थंकर थे। लगभग 600 ई.पूर्व बिहार प्रान्त के कुण्डलपुर नगर के राजा सिद्धार्थ के घर में उनका जन्म हुआ । उनकी माता त्रिशला वैशाली नरेश राजा चेटक की पुत्री थी।" (पाद टिप्पणी में उन्होंने लिखा है, श्वेतांबर मान्यता के अनुसार भगवान महावीर की माता त्रिशला चेटक की बहिन थी तथा महावीर का विवाह भी हुआ था।) पाद टिप्पणी में दी गई सूचना चंदनामतीजी ने नहीं दी है। कितु निष्पक्ष लेखक कैलाशचंद्रजी ने अन्य मत का भी आदर किया है। खेद की बात है कि आर्यिकाजी ने पंडितजी की पुस्तक के अगले ही **पृष्ठ 29-30** पर दी गई निम्न सूचना न जाने किस मानदण्ड से नहीं दी है। यह सामग्री इस प्रकार है:-

"महावीर के जन्म आदि का वर्णन करनेवाली कुछ प्राचीन गाथाएं मिलती हैं जिनका भाव इस प्रकार है" -

"सुरमहिदोच्चुदकप्पे भोगं दिव्वाणुभागमणुभूदो
पुप्फुत्तरणामादो विमाणदो जो चुदो संतो।।
बाहत्तरिवासाणि य थोवविहीणाणि लद्धपरमाऊ।
आसाढजोण्हपक्खे छट्ठीए जोणिमुवयादो ।।
कुण्डपुरपुरवरिस्सरसिद्धत्थक्खत्तियस्स णाहकुले ।
तिसिलाए देवीए देवीसदसेवमाणाए ।।

अच्छिता णवमासे अट्ठ य दिवसे चइत्तसियपक्खे ।
तेरसिए रत्तीए जादुत्तरफग्गुणीए दु ।।"

कैलाशचंद्रजी द्वारा उपर्युक्त गाथाओं का दिया गया भाव "जो देवों के द्वारा पूजा जाता था, जिसने अच्युत कल्प नामक स्वर्ग मे दिव्य भोगों को भोगा, ऐसे **महावीर जिनेंद्र** का जीव कुछ कम बहत्तर वर्ष की आयु पाकर, पुष्पोत्तर नामक विमान से च्युत हो कर, आषाढ़ शुक्ला षष्ठी के दिन, **कुण्डपुर** नगर के स्वामी सिद्धार्थ क्षत्रिय के घर, नाथवंश में, सैकड़ों देवियों से सेवित त्रिशला देवी के गर्भ में आया और वहां नौ माह आठ दिन रहकर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी की रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुए महावीर का जन्म हुआ।"

उपर्युक्त उद्धरण आगम ग्रंथ से है जिस पर आगे विचार किया जाएगा ।

(3) आर्यिका चंदनामतीजी ने अपने लेख क्र 2 पृ 41 पर डॉ. हीरालालजी जैन की पुस्तक 'महावीर युग और जीवन दर्शन' से कुण्डपुर संबंधी निम्न अंश उद्धृत किए हैं। "अनेक प्राचीन नगरों के साथ इस वैशाली का <u>दीर्घकालीन इतिहासज्ञों</u> को अता-पता नहीं था (ऊपर की लाइन में अधोरेखांकित शब्दों को पाठक जरा ध्यान से देखें। यह भाषा डॉ हीरालालजी की नहीं है। उन्होंने 'दीर्घकाल तक इतिहासज्ञों' का प्रयोग किया है। 'दीर्घकालीन इतिहासज्ञ' कौन-से होते हैं यह तो चंदनामतीजी ही जानें) किंतु विगत एक शताब्दी में जो पुरातत्व संबंधी खोज-शोध हुई है, उससे प्राचीन भग्नावशेषों व शिलालेखों आदि के आधार से प्राचीन वैशाली की ठीक स्थिति अवगत हो गई है और निस्संदेह रूप से यह प्रमाणित हो गया है कि बिहार राज्य में गंगा के उत्तर में मुजफ्फरपुर जिले के अंतर्गत बसाढ़ नामक ग्राम ही प्राचीन वैशाली है। स्थानीय खोज-शोध से यह भी माना गया है कि **वर्तमान बसाढ़ के समीप ही जो वासुकुण्ड नामक ग्राम है, वहीं प्राचीन कुण्डपुर होना चाहिए।** वहां एक प्राचीन कुण्ड में चिन्ह पाये जाते हैं जो क्षत्रियकुण्ड कहलाता रहा होगा।" इसके आगे चंदनामतीजी लिखती हैं, "अर्थात् लेखक स्वयं यह स्वीकार कर रहे हैं कि सौ वर्ष पूर्व वैशाली नाम का इस भारत देश में कोई नगर ही नहीं था और उसे बसाढ़ नामक ग्राम को वैशाली नाम देकर स्थापित कर दिया गया है अत: कटु सत्य तो यह है कि <u>यह वैशाली नगरी भी केवल इतिहासकारों के द्वारा बनाई गई वैशाली है न कि 2600 साल पहले से चली आयी वास्तविक वैशाली है।</u>"

"यह वैशाली नगरी"=आजकल की वैशाली नगरी ! किसी भी इतिहासकार ने आज की वैशाली को नगरी नहीं कहा। केवल इतना ही लिखा है कि प्राचीन वैशाली आजकल बसाढ़ ग्राम कहलाती है।

दूसरे वे यह भी मानती हैं कि 2600 साल पहले वैशाली नाम की नगरी थी । आर्यिका संभवत: यह जानती होंगी कि प्राचीन वैशाली विदेह में थी। क्या वे यह बता सकती हैं कि अब वह वैशाली कहां है? क्या कुंडलपुर ही प्राचीन वैशाली है? कुंडलपुर क्या विदेह में है? क्या इसका कोई प्रमाण वे आगमिक ग्रंथ से दे सकती हैं? पिछले लगभग 1500 वर्षो से दिगंबर जैन ग्रंथों में आचार्यगण यही लिखते आए हैं कि महावीर का जन्म विदेह क्षेत्र में वैशाली के कुण्डपुर में हुआ था। लगभग दस से भी ग्रंथों से इसका समर्थन इस लेख में किया जाएगा।

यहां इस बात पर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया जाता है कि आ. चंदनामतीजी ने डॉ. हीरालालजी के उपर्युक्त पैरा के बाद जो लिखा है, वह उन्होंने पाठकों के समक्ष नहीं रखा। जैन आगम, इतिहास, प्राकृत और संस्कृत के विख्यात विद्वान् के प्रति उन्होंने न्याय नहीं किया यही कहा जा सकता है। डॉ. हीरालालजी ने आगे लिखा है, "उसी के समीप एक ऐसा भी भूमिखण्ड पाया गया जो '**अहल्य** 'माना जाता रहा है। उस पर कभी हल नहीं चलाया गया, तथा स्थानीय जनता की धारणा रही है कि वह एक अति-प्राचीन महापुरुष का जन्मस्थान था। इसलिए उसे पवित्र मानकर लोग वहां दीपावली को अर्थात् महावीर निर्वाण के दिन दीपक जलाया करते हैं। इन सब बातों पर विचार करके विद्वानों ने उसी स्थल को महावीर की जन्मभूमि स्वीकार किया और बिहार सरकार ने भी इसी आधार पर उस स्थल को अपने अधिकार में लेकर उसका घेरा बना दिया है और वहां एक कमलाकार वेदिका बनाकर वहां एक संगमरमर का शिलापट्ट स्थापित कर दिया है। उस पर अर्धमागधी भाषा मे आठ गाथाओं का लेख हिंदी अनुवाद सहित भी अंकित कर दिया गया है जिस पर वर्णन है कि यह वह स्थल है जहां भगवान का जन्म हुआ था और जहां से वे अपने 29 वर्ष के कुमार काल को पूरा कर प्रव्रजित हुए थे। शिलालेख में यह भी उल्लेख है कि भगवान के जन्म से 2555 वर्ष व्यतीत होने पर विक्रम संवत् 2012 वर्ष में **भारत के राष्ट्रपति श्री राजेंद्रप्रसाद ने वहां आकर उस स्मारक का उद्‌घाटन किया।"**

इस स्थल का अनेक पुरातत्वविदों ने अध्ययन किया था और वैशाली की खोज की पुष्टि की थी।

जो सरकारी तंत्र को जानते हैं, वे यह शीघ्र ही समझ लेंगे कि विभागीय छानबीन और विशिष्ट सलाह expert advice महामहिम आदि को उपलब्ध कराया जाता है। यह विभागीय परामर्श Brief कहलाता है जो कि पूर्व राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्रप्रसाद को वैशाली में आगमन से पूर्व उपलब्ध कराया गया होगा और वैशाली की वास्तविक खोज की पुष्टि की गई होगी। भारतीय दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान् पूर्व राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन् भी उस स्थल पर पधारे थे और उन्होंने महावीर की जन्मभूमि की खोज की प्रशंसा की थी । इन विभूतियों का वहां आगमन और बिहार सरकार का सहयोग यथा महावीर के जन्मस्थान पर स्मारक, टूरिस्ट बंगलो, हाईस्कूल का नामकरण तीर्थंकर हाईस्कूल एवं प्राकृत शोध संस्थान की

स्थापना में सहयोग --ये सब सहज ही संभव नहीं हो सकते थे। **उच्चतम पद पर आसीन महामहिम एवं विद्वान दार्शनिक के श्लाघनीय समर्थन को भी सत्य नहीं माना जाए, तो क्या कहा जाए !** वैशाली के इतिहासकारों पर छोड़ा गया बाण उक्त आदरणीयों पर भी अप्रत्यक्ष रूप से लागू होता है।

यह बात भी खूब उछाली गई है कि बिहार सरकार के निमंत्रण पत्र आदि में कुण्डलपुर को महावीर की जन्मभूमि माना गया है। यदि कोई कनिष्ठ इस प्रकार की गलती कर बैठे, तो उसे सरकारी मान्यता नहीं माना जाता । ऊपर बिहार सरकार ने जो योगदान किया है, वह संक्षेप में दिया गया है, उसे क्यों नजरअंदाज कर दिया विदुषी आर्यिका ने । उन्हें बिहार के गजेटीयर से वास्तविकता का पता चल जाता। विद्वान् निमंत्रणपत्र जैसे कागजों को साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत नहीं किया करते, गहरा अध्ययन करते हैं। वह भी प्रामाणिक सामग्री का।

डॉ. हीरालालजी ने महावीर 'युग और जीवन दर्शन'नामक इसी पुस्तक के पृ 18 से 19और 23से 24-25 तक कुण्डपुर के संबंध में प्राचीन आगम ग्रथों से उद्धरण दिए हैं। उनकी चर्चा का संकेत भी आर्यिका ने नहीं दिया है।

जब कभी भी यह प्रश्न उठता है कि जैनधर्म की समग्र एवं सरल पुस्तक कौन-सी है, तो जैन और अजैन लोगों के समक्ष हीरालालजी की पुस्तक 'भारतीय संस्कृति में जैनधर्म का योगदान' का नाम ही सबसे पहले लिया जाता है। यह पुस्तक 1962 में छपी थी। उसके पृ 22 पर विद्वान् लेखक ने लिखा है, "भगवान (महावीर) का जन्म स्थान कहां था इस संबंध में पश्चात्कालीन जैन परंपरा में भ्रान्ति उत्पन्न हुई पाई जाती है। दिगंबर संप्रदाय ने उनका जन्मस्थान नालंदा के समीप कुण्डलपुर को माना है, जब कि श्वेतांबर संप्रदाय ने मुंगेर जिले के लछुआड़ के समीप क्षत्रियकुं ड को उनकी जन्मभूमि होने का सम्मान दिया है। किंतु *जैन आगमों व पुराणों में उनकी जन्मभूमि होने के संबंध में जो बातें कही गई हैं, वे उक्त दोनों स्थानों में घटित होती नहीं पाई जातीं।* दोनों परंपराओं के अनुसार भगवान की जन्मभूमि कुण्डपुर विदेह देश में स्थित माना गया है, (ह.पु. 2, 4 उ. पु, 74,251) और इसीसे महावीर को विदेहपुत्र, विदेहकुमार, विदेह-सुकुमार आदि उपनाम दिए गए हैं।" कितना स्पष्ट और निष्पक्ष लिखा है जैन समाज के गौरव और सुलझे हुए विद्वान् ने।

आर्यिका चंदनामतीजी ने लेख क्रमांक 2में लिखा है, "सर्व प्राचीन ग्रंथ (लगभग 2000 वर्ष पूर्व प्राचीन आचार्यों द्वारा लिखितद्ध ? तिलोयपण्णत्ति, घवला-जयधवला, उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण, वीरजिणिंदचरिउ, महावीरपुराण, वर्धमानचरित आदि अनेकानेक ग्रंथों में स्पष्ट रूप से **विदेहदेश अर्थात् बिहार प्रांत !** की कुंडलपुर नगरी में महावीर स्वामी का जन्म सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला के पवित्र गर्भ से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को हुआ था यही बात वर्णित है। लगभग 50 वर्ष पूर्व से महावीर की जन्मभूमि पर प्रश्नचिन्ह किसने

लगाया? अगली खोज क्यों प्रारंभ हुई ? यह किसी न किसी **षडयंत्र !** का ही दुष्परिणाम दिख रहा है।"

इस भारी-भरकम आरोप के संबंध में पाठक निम्न तथ्यों पर विचार करें, तो उचित होगा।

(1) प्रथम तो यह कि जिन ग्रंथों का आर्यिका ने ऊपर उल्लेख किया है, उनमें से **एक भी 2000 वर्ष प्राचीन नहीं है।** यहां उनके द्वारा निर्दिष्ट क्रम से ही ग्रंथों का काल दिया जाएगा। तिलोयपण्णत्ति में महावीर निर्वाण से 1000 वर्षों तक के राजवंशों का उल्लेख है, अतः वह ईसा की पांचवी सदी के अंत की रचना ठहरती है। षट्खंडागम पर धवला टीका वीरसेन स्वामी ने ईस्वी 816 में समाप्त की। जयधवला टीका के 20 हजार श्लोक लिखने के बाद आचार्य वीरसेन का देहांत हो गया, उनका शेष कार्य आदिपुराण के महाकवि जिनसेन द्वितीय ने 40 हजार श्लोक लिखकर सन् 837 में पूरा किया। गुणभद्राचार्य के उत्तरपुराण की रचना शक संवत् 820 में हो चुकी थी और उसकी पूजा की गई थी। जिनसेन प्रथम की रचना हरिवंशपुराण है। उसकी रचना का समय आठवीं शती है। वीरजिणिंदचरिउ का रचनाकाल सन् 968 है। असंग रचित वर्धमान चरित 10 वीं शती की काव्यरचना है। पृ 34 पर आ.चंदनामतीजी ने महावीर पुराण को सकलकीर्तिजी की रचना बताया है जो कि गलत है। वे आचार्य नहीं, भट्टारक थे। उन्होंने महावीर पुराण नहीं लिखा, **वीरवर्धमान** चरित की रचना 16 वीं सदी में की थी।

पाठक स्वयं समझ सकते हैं कि आर्यिका का कथन सही है या नहीं।

(2) दूसरे यह कि जो कुण्डपुर को महावीर का जन्म स्थान बताने का "षडयंत्र?"कर रहे हैं, उनमें विदुषी गणिनीप्रमुख आर्यिका ज्ञानमती माताजी का नाम भी शामिल करना चाहिए क्योंकि उन्होंने **"चौबीस तीर्थंकर "** नामक एक पुस्तक लिखी है। उसमें उन्होंने महावीर स्वामी के पूर्वभवों का वर्णन करने के बाद लिखा है "जब इनकी आयु छह मास बाकी रह गई तब इस भरत क्षेत्र के विदेह **देश संबंधी कुंडपुर नगर के राजा** सिद्धार्थ के भवन के आंगन में प्रतिदिन साढे सात करोड़ रत्नों की धारा बरसने लगी। आषाढ़ शुक्ल के दिन रात्रि के पिछले प्रहर में रानी प्रियकारिणी ने सोलह स्वप्न देखे और पुष्पोत्तर विमान से अच्युतेंद्र रानी के गर्भ में आगये। प्रातःकाल राजा के मुख से स्वप्नों का फल सुनकर सन्तुष्ट हुई। तदनंतर देवों ने आकर गर्भकल्याणक उत्सव मनाकर माता-पिता का अभिषेक करके उत्सव मनाया। नव मास पूर्ण होने के बाद चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के दिन रानी त्रिशला ने पुत्र को जन्म दिया। उस समय देवों के स्थानों में अपने आप वाद्य बजने लगे तीनों लोकों में सर्वत्र एक हर्ष की लहर दौड़ गई। सौधर्म इन्द्र ने बड़े वैभव के साथ सुमेरु पर्वत की पांडुक शिला पर क्षीरसागर के जल से भगवान का जन्माभिषेक किया, इन्द्र ने उस समय उनके वीर और वर्धमान ऐसे दो नाम रखे। श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकर के दो सौ पच्चास !

वर्ष बीत जाने पर **श्री महावीर स्वामी** उत्पन्न हुए थे उनकी आयु भी इसी में शामिल है।"पृ. 73-74

पाठक खुद विचार करें कि क्या आर्यिका ज्ञानमती भी षडयंत्र में शामित हैं?

जिन आचार्यों ने कुण्डपुर को महावीर की जन्मभूमि लिखा, क्या वे भी षडयंत्रकारी थे?

आर्यिका चंदनामतीजी, वैशाली और कुण्डलपुर--आ ..चंदनामतीजी ने "चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी के 2600वें जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में " एक नाटक 'माता त्रिशला के अनोखे सपने' लिखा है। उसमें राजा चेटक, रानी सुभद्रा, और मंत्री चेटक की पुत्री के लिए योग्य वर की चर्चा कर रहे हैं। उस समय मंत्री कह रहा है कि "महारानीजी ! हमारे इस वैशाली नगरी के निकट ही कुण्डलपुर नामक एक विशाल नगर है। वहां के धर्मपरायण राजा "सर्वाथ" के पुत्र युवराज सिद्धार्थ हैं" इत्यादि

अब पाठक या यात्री स्वयं ही निर्णय करें कि (1)क्या कुण्डलपुर एक विशाल नगर है? (2) क्या कुण्डलपुर वैशाली के निकट है। वह कम से कम 50-60 कि. मी.दूर है। (3) वास्तव में **कुण्डपुर ही वैशाली के निकट है।** यह भ्रामक कथन का उदाहरण है।

हाल ही में एक पोस्टर छपा है।उसका शीर्षक है, भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर विकास--7फरवरी से15 फरवरी-पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं महामस्तकाभिषेक महोत्सव-सान्निध्य आर्यिका ज्ञानमती, आर्यिका चंदनामती एवं निर्देशन क्षुल्लक मोतीसागर-कुण्डलपुर में त्रिकाल चौबीसी एवं महावीर मंदिर निर्माण-भूमिपूजन 9 सितंबर, भगवान मंदिर शिलान्यास 10 अक्टूबर 2002।

पोस्टर में लिखा है, "दिगंबर जैन आगम ग्रंथों के आधार पर आज से 2600 वर्ष पूर्व भगवान महावीर ने जिस **कुण्डलपुर (विदेह देशस्थ?)** *में जन्म लिया था, वह कुण्डलपुर वर्तमान में नालंदा जिले में स्थित है, जो पिछले 2600 वर्ष से समस्त जैन समाज की आस्था का केंद्र बना हुआ है। "*

पोस्टर के संबंध में निम्नलिखित प्रश्नों का समाधान आवश्यक है--

(1) जिस समय यह पोस्टर छपा है, उस समय दोनों आर्यिकाएं इलाहाबाद में चातुर्मास कर रही हैं, इस कारण वे कुण्डलपुर तो नहीं जा सकी होंगी। इस प्रकार उनकी अनुपस्थिति में ही भूमिपूजन (सितंबर) और मंदिर का शिलान्यास उन्होंने क्यों करवा लिया? क्या जल्दी थी ?

(2) पोस्टर मे यह नहीं लिखा है कि ये दो कार्य किसके करकमलों से संपन्न हुए। उनके नाम और फोटो तो सुर्खियों में छपते है !

(3) महावीर मंदिर की प्रतिष्ठा और महामस्तकाभिषेक वे 7 फरवरी और 15 फरवरी के बीच में ही करा लेने का कार्यक्रम बना चुकी हैं । उनका सारा प्रचार तो महावीर स्वामी को लेकर है। इस कार्यक्रम के लिए वे फरवरी के बाद आनेवाले **महावीर के जन्मदिन मंगलवार 15 अप्रैल 2003** को उन्होंने किस कारण से उपयुक्त नहीं माना ?

क्या उनके द्वारा चुनी गई तारीखों का संबंध भारत सरकार के वित्तीय वर्ष (Financial Year) से तो नहीं है ? मार्च में वह समाप्त हो जाता है। स्मरण रहे, भारत सरकार ने महावीर के जन्मस्थान के विकास के लिए उपयुक्त राशि निर्धारित की है।

(4) यदि विदुषी आर्यिकाएं "कुंडलपुर विदेहस्थ" मानती हैं, तो वे यह स्पष्ट करने की कृपा करें कि विदेह क्षेत्र की पूर्व, पश्चिम और उत्तर एवं दक्षिण सीमाएं क्या हैं ?

प्राचीन विभाजन तो पूर्व विदेह और पश्चिम विदेह है। दूसरी सीमाएं तो स्पष्ट हैं।

महावीर स्वामी का जन्म स्थान विदेह में है यह तो आर्यिकाओं को भी मान्य है। इसलिए कुंडलपुर किस विदेह क्षेत्र में है यह स्पष्ट होना आवश्यक है।

(5) पोस्टर में दावा किया गया है कि कुंडलपुर पिछले 2600 वर्षों से जैन समाज की आस्था का केंद्र रहा है। कोई आगमिक, ऐतिहासिक या पुरातात्विक प्रमाण ? कोई खुदाई या कोई यात्रा विवरण जो 2600 वर्षों से चली आई मान्यता सिद्ध कर सके । इस मान्यता में वैशाली फिट होती है या नहीं । जैन आचार्य तो कुण्डपुर के साथ वैशाली का और/या विदेह क्षेत्र का उल्लेख करना नहीं भूले। वैशाली भी ढूंढनी पड़ेगी, नालंदावाले कुण्डलपुर के आसपास। नहीं मिली, तो **आचार्यों को असत्य वचन के दोषी** कहना पड़गा।

उपर्युक्त के अतिरिक्त 2600 वर्ष के उल्लेख में तो महावीर स्वामी का **जन्म और 72 वर्ष की उनकी आयु का समावेश भी हो जाता है** । क्या आर्यिकाएं यह कहना चाहती हैं कि महावीर के जन्म के समय से ही नालंदा के पास स्थित कुंडलपुर की यात्रा जैन समाज ने प्रारंभ कर दी थी ?

प्रमाणों के बिना ऐसे कथन अप्रामाणिक ही हैं।

ईस्वी सन् 1332 में जिनप्रभ सूरि ने तीर्थकल्प की रचना की थी, उसमें उन्होंने कुण्डग्राम में वीर की मूर्ति होने की बात लिखी है। इससे स्पष्ट है कि 13वीं सदी तक कुण्डग्राम (जो पुर से ग्राम होगया होगा) की मान्यता वीर जन्मभूमि के रूप में थी। सूरिजी ने लिखा है---कुण्डग्रामे ..... वीरः । ऊपर कहा जा चुका है कि उक्त सदी तक मुस्लिम आक्रमण हो चुके थे।

पुस्तकों की सूची-कुण्डलपुर के समर्थन में आ.चंदनामतीजी ने 27 पुस्तकों की सूची दी है जिनमें से कुछ भजन, राधेश्याम तर्ज पर कीर्तन या कविता , पूजन, स्तुति, आरती, चालीसा आदि से संबंधित हैं। इन्हें आगम ग्रंथ तो नहीं माना जा सकता । वे स्वयं **"आठ प्राचीन ग्रंथों के अनुसार (पृ 35)"** ही महावीर जन्मभूमि कुंडलपुर सिद्ध करना

चाहती हैं। ये प्राचीन ग्रंथ तो प्राकृत, संस्कृत या अपभंश में हैं। इसलिए इनका ही विचार उचित होगा।

वैशाली (बसाढ़) में प्राकृत शोध संस्थान में प्राध्यापक डॉ. ऋषभचंद जैन फौजदार ने **21** संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश ग्रंथों से कुण्डपुर के समर्थन में सूचनाएं दी हैं। (एक सेमिनार में वे प्रस्तुत लेखक के पास तिष्ठे थे। उनसे गुजारिश की थी कि फौजदारी मत कर देना। लेखक आदिपुराण के कुछ अंशों पर उनसे सहमत नहीं था।) श्री फौजदार ने 49 जैन, जैनेतर और विदेशी विद्वानों के कुण्डपुर के संबंध में मत के लिए यह अतिरिक्त सूची प्रस्तत की है। अस्तु निश्चय आगम ग्रंथों से ही होना चाहिए। आगम में क्या उल्लेख हैं, यह आगे पढ़िए।

शोध पर आर्यिका का मत-- ऐसा लगता है कि महावीर की जन्मभूमि कुण्डपुर है इस खोज करनेवालों से वे बेहद खफा हैं। ठंडे दिल से वे शोध के महत्व पर विचार करें। मोहेन-जो-दडो और हडप्पा की खोज ने ही जैनधर्म की प्राचीनता 5000 हजार साल पुरानी तो है ही यह सिद्ध कर दिया है। भारतीय पुरातत्व विभाग के पूर्व डायरेक्टर जनरल श्री टी. रामचंद्रन् ने एक आकृति में ऋषभदेव को पहिचाना है। यदि आर्यिकाजी प्रस्तुत लेखक से अप्रसन्न न हों , तो वह उन्हें वह उस सील का चित्र दिखा सकता है जिसमें नमि और विनमि योगासन में विराजमान मुनि आदिनाथ को यह उलाहना दे रहे हैं कि आपने अपने पुत्रों को राज्य बांट दिया, हमें कुछ नहीं मिला। (नमि और विनमि भगवान के साले थे। इस रिश्ते और शिकवे की जिम्मेदारी जिनसेन आचार्य पर है) प्रस्तुत लेखक तो सील का मिलान आदिपुराण से करवा सकता है। उक्त खोज के कारण ही विश्व की इतिहास पुस्तकों, विश्वकोशों में Indus Valley Civilization का अध्याय ही जुड़ गया है।

आर्यिकाजी कुण्डपुर संबंधी महत्वपूर्ण आधुनिक खोज पर बिना पूर्वाग्रह के विचार करें।

विदेह क्षेत्र और उसकी सीमा

विदेह के दो अर्थ हैं--(1) जो कर्मबंध की परंपरा से रहित हो जाते हैं, उन्हें विदेह कहा जाता है। (2) विदेह जनों के संबंध से जनपद को विदेह जनपद या विदेह क्षेत्र कहा जाता है। महावीर विदेह भी (हो गए)और पश्चिम विदेह क्षेत्र के निवासी भी थे। विदेह की परिभाषा तत्वार्थवार्तिक से ली गई है। जैन समाज सीमंधर स्वामी को भी विदेह क्षेत्र में ही स्मरण करता है। नालंदा के कुण्डलपुर पर विदेह की परिभाषा लागू नहीं होती है।

विदेह क्षेत्र की सीमा महावीर के समय में इस प्रकार थी--पश्चिम में गंडकी नदी, उसके पार श्रेणिक का राज्य जो मगध के नाम से इतिहास में भी विख्यात है। गंडकी नदी **पश्चिम विदेह** की सीमा थी। इस नदी का प्राचीन नाम सदानीरा था। यह बहुत गहरी है और

पटना के पास गंगा में मिलने पर इसका पाट 1.6 km हो जाता है। (देखिए, Census of India, 1981, Handbook of Vaishali) इस नदी में नावों के द्वारा पाटलि ग्राम और वैशाली के बीच माल लाया और ले जाया जाता था। यह क्रम आज भी जारी है। वैशाली एक बड़ी मंडी थी। वहां से नेपाल से व्यापार होता था। जब मुगली आक्रमणों के कारण बाधा पड़ी, तो जैनी भाई वहां से भाग गए। सन् 80 के आसपास गंडकी में रेलवे का जहाज यात्रियों को पटना से हाजीपुर-सोनपुर जाने के लिए चलता था । वहां से यात्री वैशाली या मुजफ्फरपुर आदि जा सकते थे । रेलवे के टिकट में ही पहलेजाघाट तक के जहाज का किराया शामिल होता था। पहलेजाघाट (सचमुच पहले-जा-घाट ही था) वहां से लोग टेम्पो आदि के लिए दौड़ लगाते थे। प्रस्तुत लेखक ने भी यह कठिन यात्रा वैशाली के लिए की थी। अब तो पटना से सीधी बस मिलती है। जैनों और विद्वानों (ये अलग ही होते हैं। शायद इसी कारण आदिपुराण में इन्हें व्याकरण और छल-छिद्र में प्रवीण कहा है।) को महावीर की जन्मभूमि कुण्डपुर (आजकल वासोकुण्ड) और वैशाली की यात्रा पर अवश्य जाना चाहिए। मुनि तो पैदल ही विहार करते हैं। उन्हीं के उपाध्याय ज्ञानसागरजी ने घूम-घूम कर सराक भाइयों और जैनधर्म से उनके संबंध को उजागर किया है। मुनियों के सर्टिफिकेट पर कुण्डपुर की वास्तविकता सामने आएगी। साधारण लोगों के लिए रेलवे ने वैशाली एक्सप्रेस चला दी है। बिहार सरकार ने भी वैशाली जिला कायम कर दिया है। देर किस बात की !!

यदि आप हाजीपुर, सोनपुर या मुजफ्फरपुर से बस द्वारा यात्रा करें, तो आपको वह सब कुछ देखने को मिलेगा जो कि पुराणों में आचार्यों ने वैशाली के संबंध में वर्णन किया है। मार्ग में कमल के फूल ही फूल, आम के घने वृक्ष, केले के पेड़, हरे-भरे खेत, हरियाली ही हरियाली । कहा जाता है कि इस क्षेत्र में अकाल नहीं के बराबर पड़ा। प्रस्तुत लेखक ने सूक्ष्म अवलोकन किया है। एक उद्देश्य यह भी है कि नालंदा के कुंडलपुर से वैशाली क्षेत्र के कुण्डपुर से तुलना करें। जो नजारा वैशाली में है, वह कुंडलपुर में कहां !

हाजीपुर और समीपस्थ सोनपुर के बीच में भगवानपुरा स्टेशन है। यह नाम क्यों पड़ा इसके लिए विद्वान विचार करें। वहां जाएं। वर्षा-मौसम चातुर्मास के लिए रिजर्व रखें।

पूर्व में सीतामढ़ी और उसके ऊपर का नेपाल की तराई का कुछ भाग । सीतामढ़ी सीता का जन्म स्थान माना जाता है जो कि लगभग 500 वर्ष पूर्व ही प्रकाश में आया है। इस स्थान से ऊपर जनकपुर है जो कि राजा जनक की राजधानी के रूप में मान्य है वाल्मीकि रामायण के आधार पर। इस रामायण में कहा गया है कि धनुष तोड़ने के लिए जनकपुर जाते समय राम एक रात वैशाली में रुके थे और उन्होंने वैशाली को पवित्र नगरी कहा था। राजा जनक के अंतिम वंशज कलार ने एक कन्या के साथ दुराचार किया इसलिए जनपद निवासियों ने उसकी हत्या कर दी और मिथिला जनपद को **वैशाली संघ में** सम्मिलित कर लिया। यह घटना 725 इस्वी पूर्व की बताई जाती है। महावीर स्वामी के समय में मिथिला

जनपद का क्षेत्र **पश्चिम विदेह** के वैशाली संघ में शामिल था और उसका एक प्रमुख घटक था। कौशिकी नदी विदेह की पूर्वी सीमा थी।

खेद की बात है कि वास्तविक विदेह क्षेत्र की उपेक्षा कर आपत्काल में कुंडलपुर को महावीर की जन्मभूमि मान लिए जाने की बात को स्वीकार करने के बजाए कुण्डपुर को महावीर की वास्तविक जन्मस्थली नहीं मान कर उसे नकारने पर पुष्ट प्रमाण नहीं होते हुए भी आर्यिकाऐं तुली हुई हैं। **अधिकांश मुनि भी शायद चुप हैं।** पंचकल्याणक कराने में वे अपने को धन्य संभवतः मानते हैं। वे विश्वशांति महायज्ञ आदि में लगे हैं। अपने घर में अंधेरा और सड़क पर लालटेन जलाई जाती है। उदासीन रहने के कारण ही भ्रामक प्रचार करनेवाले सफल होते हैं।

वैशाली के **उत्तर** में उससे अनतिदूर हिमालय पर्वत है।

दक्षिण में काशी-कोसल जनपद थे, अब भी हैं किंतु उत्तरप्रदेश के भाग के रूप में। राजा श्रेणिक डिप्लोमेट थे। उन्होंने वैशाली के गणपति, आज की भाषा में अध्यक्ष गणराजा चेटक की पुत्री चेलना से और कोसल नरेश की राजकुमारी से विवाह कर अपने राज्य को सुरक्षित बना लिया था। उस समय उत्तर में चीन का भय नहीं था इसलिए खूब फुरसत थी। उनका क्षेत्र मगध कहलाता था। यदि वह अस्तित्व में था, तो कुंडलपुर उनके अधीन था ही । शायद इन्हीं परिस्थितियों में वे महावीर के प्रधान श्रोता बने और गौतम गणधर से भी अपने और अपने पुत्र अभयकुमार एवं अन्यों के पूर्व भवों की कहानियां सुनते नहीं अघाये। हो सकता है कि उनसे फुरसत नहीं मिलने के कारण ही गौतम स्वामी वैशाली तथा वीर प्रभु के विहार का विवरण हमारे लिए नहीं छोड़ गए जिसकी हमें आवश्यकता है। यदि नालंदावाला कुंडलपुर महावीर का जन्मस्थान होता, तो वे राजा श्रेणिक को कोई न कोई प्रसंग निकालकर उसके वैभव का वर्णन अवश्य सुनाते और वह गुणभद्राचार्य के माध्यम से हम भी सुनते। उज्जैन में महावीर पर उपसर्ग का विवरण तो है, हेमांगद देश (कर्नाटक में आजकल का गोलार फील्ड) के राजा जीवंधर का महावीर से दीक्षित होने की सूचना भी है। दीक्षा या केवलज्ञान के बाद यदि महावीर नालंदा स्थित तथाकथित अपने जन्मस्थान कुंडलपुर आए होते, तो गौतम स्वामी श्रेणिक को वहां भी उपस्थित पाते और यह समाचार हमें भी महावीर की जन्मभूमि का प्रश्न दो मिनिट में हल करने का अवसर देता। तथ्य यह है कि **कुंडलपुर में महावीर के आगमन तक का उल्लेख श्वेतांबर ग्रंथों में भी नहीं मिलता। उनमें तो महावीर के विहार का पूरा हिसाब-किताब है।** इसलिए वैशाली से भागे जैनियों ने कुंडलपुर को महावीर की जन्मभूमि की कल्पना किसी भट्टारक के कहने से कर ली यही सत्य जान पड़ता है। उसने कहा होगा रोते क्यों हो, इस स्थान को ही कुण्डपुर मानलो। क्या आज का प्रबुद्ध जैन समाज भी इस असत्य पर अपनी मुहर लगा दे।

अब आगम के प्रमाणों की बातः-आर्यिका चंदनामतीजी ने लिखा है, "आठ प्रमुख

प्राचीन दिगंबर जैन ग्रंथों के अनुसार मैंने महावीर स्वामी की जन्मभूमि कुंडलपुर नगरी का अस्तित्व पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है" (कुंडलपुर नाम की एक नगरी भी है, यह बात बहुत-से पाठक या यात्री शायद पहली बार सुनेंगे) प्रस्तुत समीक्षा में दस से भी अधिक दिगंबर ग्रंथों से उनके मत पर विचार किया जाएगा। किंतु वह होगा कालक्रम के अनुसार।

पहले आगम की परिभषा। नियमसार में आगम की परिभाषा इस प्रकार की गई है-"तस्स मुहग्गदवयणं पुव्वावरदोसविहियं सुद्धं आगमिदि कहियं।" अर्थात् पूर्वापरविरोधादि दोषों से रहित शुद्ध आप्त के वचन को आगम कहते हैं। आगम का शुद्ध स्वरूप विशेष बुद्धि के धारक आचार्य निरूपित करते हैं। इसीलिए आचार्य परंपरा से आगत मूल सिद्धांत को भी आगम कहते हैं। उसमें जो गड़बड़ करते हैं, उनके लिए भगवती आराधना में ऐसे लोग क्या-क्या करते हैं, इसका विवरण ही दिया गया है। पढ़िए :-

अक्षरपदादिनां न्यूनताकरणं अतिवृद्धिकरणं,
विपरीतपौर्वापर्य रचना विपरीतार्थनिरूपणा,
ग्रंथार्थयो वैपरीत्यं अमी ज्ञानातिचाराः ।

अर्थ-अक्षर, शब्द, वाक्य, वरण, इत्यादिकों को **कम करना, बढ़ाना,** पीछे का संदर्भ आगे लाना, आगे का पीछे करना, **विपरीत अर्थ का निरूपण करना,** ग्रंथ व अर्थ में विपरीतता करना, ये सब **ज्ञानातिचार हैं (ज्ञान के दोष हैं) ।**

पाठक देखेंगे कि कुण्डलपुर की धूम मचानेवालों ने इनमें से कुछ अतिचारों की उपेक्षा की है ऐसा स्पष्ट जान पड़ता है। ऐसा करना जैन परंपरा के लिए चिंता का विषय है।

(1) सबसे प्राचीन आगम ग्रंथ कषायपाहुड़ (प्राकृत नाम), कषायप्राभृत (संस्कृत) प्राभृत का अर्थ है- जो प्रकृष्ट अर्थात् तीर्थंकरों द्वारा आभृत अर्थात् प्रस्थापित किया जाता है, वह प्राभृत कहलाता है या जो विद्यारूप धन के धारक प्रकृष्ट आचार्यों के द्वारा धारण किया गया है या व्याख्यान किया गया है अथवा परंपरा से लाया गया है, वह प्राभृत है। इस पाहुड़ का दूसरा नाम पेज्जदोस विहत्ती (विभक्ति) भी है । पेज्ज का अर्थ है-**राग** (प्रेयस्) और दोस से आशय द्वेष से है । इस ग्रंथ में कर्म किस स्थिति में और किस कारण से आत्मा के साथ जुड़ते हैं और राग द्वेषादि दोष मोह के दूसरे नाम है यह बताया गया है ।

कषायप्राभृत प्राकृत में रचित आचार्य गुणधर की रचना है। इनका समय विक्रम पूर्व की प्रथम शताब्दी आंका गया है। वैसे इनकी गणना महावीर निर्वाण के 683 वर्षो के बाद की अवधि में हुए आचार्यों में की जाती है। इन्हें **श्रुतधर आचार्य** माना जाता है । इनकी गाथाएं प्रमाण मानी जाती हैं । इन्होंने कुल 233 गाथाएं लिखी थीं। ये सूत्र गाथाएं परंपरा से मुनि आर्यमंक्षु और नागहस्ति को प्राप्त हुईं। इन आचार्यों से भले प्रकार सुनकर यतिवृषभ ने उन पर चूर्णिसूत्रों की रचना की जिनकी संख्या 6000 श्लोक है। चूर्णिसूत्र को aphorism या संक्षिप्त व्याख्या कह सकते हैं। इनसे ही जयधवला टीका की रचना हुई है जिसके प्रारंभ

का एक तिहाई 20 हजार वीरसेनाचार्य ने और शेष 40 हजार उनके शिष्य जिनसेनाचार्य द्वितीय ने लिखा है। धवलाटीका की चर्चा यथास्थान की जाएगी।

प्रस्तुत लेखक ने वीर सेवा संघ, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित 'कषायपाहुड' के 900 के लगभग पृष्ठ पलटे किंतु उनमें तिलोयपण्णत्ति में महावीर की जन्मभूमि के रूप में उल्लिखित 'कुण्डले'नहीं मिला। जो पहले से ही ज्ञात या सरल है, उसे आचार्य ने "बहुरूपित" लिख दिया है। इसलिए कुंडले का विशेष अर्थ जान पड़ता है। किसी विद्वान को चूर्णियों में उसका अर्थ कुंडलपुर मिल जाए, तो लेखक को सूचित करने की कृपा करें। उसका अर्थ कुंडलपुर नहीं है, ऐसा जान पड़ता है। "निरंकुशाः कवयः" कवि अपनी चतुराई भी दिखाते हैं।

उक्त ग्रंथ में महावीर स्वामी के जन्म और कुण्डपुर के संबंध में निम्न उद्धरण मूल रूप में नीचे दिया जाता है --"तं जहा , आषाढ़जोण्हपक्खछट्ठीए कुण्डपुर णगराहिव -णाह वंस सिद्धत्थणरिंदस्स -तेरसीए रत्तीए तिसिलादेवीए गब्भमार्गतूण तत्थ अट्ठदिवसाहिय णवमासे अच्छिय चइत्त सुक्कपक्ख तेरसीए रत्तीए उत्तरफल्गुणीणक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो वड्ढमाण जिणिंदो।"

इसका अनुवाद भी इस प्रकार दिया गया है--आषाढ़ महीना के शुक्लपक्ष की षष्ठी के दिन कुण्डपुर (कुण्डलपुर) नगर के स्वामी नाथवंशी सिद्धार्थ नरेंद्र की त्रिसलादेवी के गर्भ में आकर और वहां नौ मास आठ दिन रह कर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुए भगवान महावीर गर्भ से बाहर आए " पृ 76-77 । उद्धृत अंश कषायपाहुड से लिए गए हैं जिसका प्रकाशन 1944 में चौरासी संघ, मथुरा से हुआ था।

उक्त उद्धरण से यह स्पष्ट है कि मूल गाथा में कुण्डपुर ही है किंतु आर्यिका **चंदनामती ने कुंडलपुर को ही अपने ठोस प्रमाण के रूप में ग्रहण किया है** । कुण्डपुर के साथ ही कुंडलपुर अनुवादक ने कोष्ठक में लिख दिया है । सारे विश्व में यह मान्यता है कि जब मूल (Original text) और अनुवाद (Translation) में भेद हो, तो मूल को ही **प्रामाणिक माना जाता है।** यदि आर्यिका चाहें, तो साहित्य अकादेमी से भी निर्णय ले सकती हैं । हीब्रू से बाइबिल का अनुवाद तीन बार अस्वीकृत किया गया था । बाइबिल का शुद्ध अनुवाद प्रस्तुत लेखक के पास है। उक्त उद्धरण से यह स्पष्ट है कि मूल गाथा में **कुण्डपुर ही है किंतु आर्यिका चंदनामतीजी ने अनुवादक द्वारा लिखित कुंडलपुर को ही अपने ठोस प्रमाण के रूप में ग्रहण किया है। इस तथ्य पर विद्वानों एवं मुनियों का ध्यान आकर्षित किया जाता है।**

खेद है कि आर्यिकाजी ने आचार्य के मूल शब्द कुण्डपुर को तिलांजलि दे दी और मूल के साथ ही अनावश्यक विकल्प (कुंडलपुर) को लेकर कुंडलपुर का डंका बजा

दिया। अनुवादक को यहां केवल कुण्डपुर ही लिखना चाहिए था क्योंकि मूल गाथा में कुंडलपुर नहीं है।

शायद वे जानती होंगी कि आचार्य धरसेन ने षट्खंडागम के कर्ता पुष्पदंत और भूतबलि की परीक्षा लेने के लिए एक को **अधिकाक्षरी** और दूसरे को **हीनाक्षरी विद्या** बता कर उन्हें सिद्ध करने के लिए कहा था। जब विद्याएं सिद्ध हुईं, तो एक के दांत बड़े थे और दूसरी कानी देवी के रूप में प्रकट हुई। उन्हें देख कर दोनों मुनियों ने मंत्र की त्रुटि ठीक कर फिर साधना की, तो देवियां अपने स्वाभाविक रूप में प्रकट हुईं । आचार्य को मुनियों की विद्वत्ता का निश्चय हो गया और उन्हें कर्मप्रकृतिप्राभृत पढ़ाना प्रारंभ किया। तो **यहां तो आर्यिकाजी ने आचार्य के मूल लेख को ही बदल दिया है।** *उनका यह कार्य ऊपर गिनाए गए अतिचार में भी गिनाया जा सकता है। कोई मुनि आगे आएं और साहस कर अपना निर्णय प्रकाशित करें ।*

उपर्युक्त ग्रंथ की गाथा 23 में भी **कुण्डपुर** आया है । संबंधित गाथाएं यहां ही दी जारही हैं। आर्यिका चंदनामतीजी ने भी ये गाथाएं उद्धृत की हैं और पुस्तिका के पृ 32 पर "अर्थात् कुण्डपुर नगर के" इत्यादि छापा है किंतु वह है उनके प्रमाण नं 1 के अंतर्गत ही। प्रमाणों की गिनती से ठीक पहले जो जोरदार शब्द उन्होंने लिखे हैं, उन्हें यहां उद्धृत करने से स्थिति स्पष्ट हो जाएगी "हमारे जिन प्राचीन ग्रंथों की उपेक्षा करके आधुनिकता की होड़ में आगे बढ़ रहे लोग केवल " मेरा सो खरा" वाली नीति अपनाते हुए भगवान महावीर की वास्तविक जन्मभूमि "कुंडलपुर" पर प्रश्नचिन्ह लगाकर अन्य नूतन स्थान को जन्मभूमि बनाने का प्रयास कर रहे हैं, उन्हें निम्न ठोस आगम प्रमाणों की ओर भी ध्यान देना चाहिए-" इत्यादि।

<u>क्या कुण्डपुर और वैशाली नूतन स्थान हैं? जिन आचार्यों ने इनका उल्लेख किया, क्या वे सब असत्य लिख गए !</u>

मूल में उपयोगी गाथाएं (उज्जंतीओ गाहाओ) दी गई हैं। ये 21से 24 तक की गाथाएं और उनका अनुवाद निम्न प्रकार है उनमें भी **कुण्डपुर** का उल्लेख है लेकिन आर्यिकाजी ने कुंडपुर (कुण्डलपुर) छापा है। फिर उन्होंने कुण्डपुर को कुंडलपुर किस नियम से कर दिया ? कुंडलपुर का समर्थन कैसे हो गया ?

"सुरमहिदोच्चुदकप्पे भोागं दिव्वाणुभागमणुभूदो
पुप्फुत्तरणामादो विमाणदो जो चुदो संतो।। 21।।
बाहत्तरिवासाणि य थोवविहीणाणि लद्धपरमाऊ।
आसाढजोण्हपक्खो छट्ठीए जोणिमुवयादो ।। 22।।
कुण्डपुरपुरवरिस्सरसिद्धत्थक्खत्तियस्स णाहकुले ।

तिसिलाएं देवीए देवीसदसेवमाणाए ।। 23।।
अच्छिता णवमासे अट्ठ य दिवसे चइत्तसियपक्खे ।
तेरसिए रत्तीए जादुत्तरफग्गुणीए दु ।। 24 ।।"

पं. कैलाशचंद्रजी द्वारा उपर्युक्त गाथाओं का दिया गया भाव -"जो देवों के द्वारा पूजा जाता था, जिसने अच्युत कल्प नामक स्वर्ग में दिव्य भोगों को भोगा, ऐसे महावीर जिनेंद्र का जीव कुछ कम बहत्तर वर्ष की आयु पाकर, पुष्पोत्तर नामक विमान से च्युत हो कर, आषाढ़ शुक्ला षष्ठी के दिन, कुण्डपुर नगर के स्वामी सिद्धार्थ क्षत्रिय के घर, नाथवंश में, सैकड़ों देवियों से सेवित त्रिशलादेवी के गर्भ में आया और वहां नौ माह आठ दिन रहकर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी की रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुए महावीर का जन्म हुआ।"

पाठक विशेष रूप से घ्यान दें कि आर्यिका एक ओर तो मूल गाथा के कुण्डपुर का उल्लेख कर रही हैं और दूसरी ओर कहती हैं कि ये गाथाएं कुण्डलपुर के समर्थन के लिए "आगमप्रमाण " हैं । क्या ऐसा करना उनके लिए उचित है ?

आचार्य गुणधर ने कषायपाहुड़ की 233 गाथाओं में एक विशाल ग्रंथ निबद्ध कर दिया है ताकि वह मौखिक रूप से सुनकर याद रखा जा सके। पं. कैलाशचंद्रजी के शब्दों में आचार्य के "कषायरूपी गागर में श्रुतसागर भरा हुआ है।" इस कारण जैन सिद्धांत का विशिष्ट ज्ञाता ही यह ग्रंथ समझ सकता है। इन ही गाथाओं पर धवला टीका में पेज्जपाहुड के 16 हजार पद हो गए हैं।आचार्य ने यह ग्रंथ नागहस्ति और आर्यमंक्षु नामक दो मुनियों को पढ़ाया था। इन मुनियों से तिलोयपण्णत्ति के रचयिता आचार्य यतिवृषभ ने यह ज्ञान प्राप्त किया और गाथाओं पर 6000 चूर्णिसूत्र लिखे। चूर्णिसूत्रों की चर्चा यथास्थान की जाएगी। प्रस्तुत ग्रंथ में तीन ग्रंथ साथ-साथ चलते है--मूल कषायपाहुड, चूर्णिसूत्र और जयधवला टीका।

आचार्य गुणधर के नाम से गुणधर संघ भी था । उनसे पहले आगम का पठन-पाठन संभवतः मौखिक ही चलता था। आचार्य ने ही सबसे पहले गाथाओं को पुस्तक रूप में लिखकर पुस्तक-लेखन प्रारंभ किया ऐसा पं. कैलाशचंद्रजी का मत है।

② महाकवि विमलसूरि दिगंबर और श्वेतांबर दोनों ही संप्रदायों में मान्य हैं। डा. हीरालालजी ने उनके काव्य पउमचरियं की विस्तार से चर्चा की है। सूरिजी ने स्वयं सूचना दी है कि उन्होंने अपने काव्य की समाप्ति महावीर निर्वाण के 530 वर्ष बाद की है अर्थात् यह काव्य ईस्वी सन् 7 (530-527 जब कि महावीर स्वामी का निर्वाण ईसा से 527 वर्ष पूर्व हुआ था) में पूर्ण की थी। उनका कहना है कि उन्होंने इस कथा का ज्ञान गुरू-शिष्य परंपरा से प्राप्त किया था। यह कथा नारायण और बलदेव अर्थात् राम और लक्ष्मण से

संबंध रखती है। कथा का प्रारंभ श्रेणिक द्वारा गौतम गणधर से इस प्रश्न से होता है कि बंदरों ने रावण जैसे प्रतापी का नाश कैसे किया ? क्या सचमुच कुंभकर्ण 6 महिने सोता था ? गौतम गणधर ने श्रेणिक को वास्तविक रामायण सुनाई थी। जैसे हनुमान आदि वानर नहीं थे बल्कि उनके झंडे पर वानर का चिन्ह था, रावण के दस मुंह नहीं थे बल्कि गले के हार में उसक दस मुंह दिखाई देते थे इत्यादि । इस काव्य में महावीर जन्म स्थान इस प्रकार है-

अत्थेत्थ भरहवासे कुण्डग्गामं पुरं गुणसमिद्धं ।
तत्थ य नरिंदवसहो सिद्धत्थो नाम नामेणं ।। 2-21

यह गाथा प्राकृत में है। इसका अर्थ है- इस भरत क्षेत्र में गुण (गुणीजनों) एवं समृद्धि से भरपूर कुण्डग्राम नाम का एक नगर था। उसमें राजाओं में वृषभ (श्रेष्ठ) सिद्धार्थ राजा राज्य करता था । (गणराजा सिद्धार्थ महावीर के पिता थे ।)

महावीर जन्मभूमि संबंधी यह सबसे प्राचीन उल्लेख है।

आचार्य कुंदकुंद का समय ईसा की प्रथम सदी है। उनके समय का निर्धारण दक्षिण भारत में सर्वाधिक लोकप्रिय नीति ग्रंथ तिरुक्कुरल से भी किया जा सकता है। उसका स्मरण दूसरी शती के शिलप्पदिकारम् नामक महाकाव्य के कवि इलंगो अडिगल (आचार्य इलंगो) ने भी किया है। इस काव्य में जैन श्राविका कण्णगी की करुण कहानी है। वैसे कुंदकुंद का समय डॉ. ज्योतिप्रसाद ने ईसा पूर्व 8 से ईस्वी 44 तक किया है । आचार्य ने स्तुतिपरक दस भक्तियां प्राकृत में लिखी हैं जिनमें निव्वाणभत्ति, थोस्सामि थुदि तित्थयर भत्ति (तीर्थंकर भक्ति) प्रमुख हैं। इन की अनेक प्रतियां हैं। संभवतः इनका शुद्ध संस्करण नहीं निकला है। प्रस्तुत प्रसंग में इनकी उपयोगिता इस प्रकार है। इनके संबंध में उल्लेख है कि प्राकृत में जिन भक्तियों की रचना कुंदकुंदाचार्य ने की थी, उनका आचार्य पूज्यपाद ने संस्कृत में अनुवाद कर डाला। "संस्कृताः सर्वा विभक्तयः पूज्यपादस्वामीकृताः प्राकृतास्तु कुंदकुंदाचार्यकृताः" देखिए अगला पैरा ।

③ आचार्य पूज्यपाद ईसा की 5 वीं सदी के आचार्य है। इनका उल्लेख देवनन्दि पूज्यपाद के रूप में अधिकतर किया जाता है। आचार्य का मूल नाम देवनन्दि है किंतु प्रतिभाशाली होने के कारण जिनेंद्रबुद्धि और देवों द्वारा भी पूजे जाने के कारण पूज्यपाद कहलाते हैं। ये दार्शनिक, योगसाधक, वैद्यक और व्याकरण के विद्वान थे। इनके संबंध में कुछ घटनाएं भी प्रचलित हैं जैसे विदेह गमन , लोहे का स्वर्ण में परिवर्तन आदि । इनकी अधिक प्रसिद्धि जैनेंद्र व्याकरण के कारण है। हरिवंशपुराण के रचयिता जिनसेनाचार्य ने भी इनका स्मरण किया है। इनके द्वारा रचित अथवा अनूदित संस्कृत दशभक्ति में एक निर्वाण भक्ति है, उसमें महावीर की जन्मस्थली के संबंध में निम्न श्लोक है---

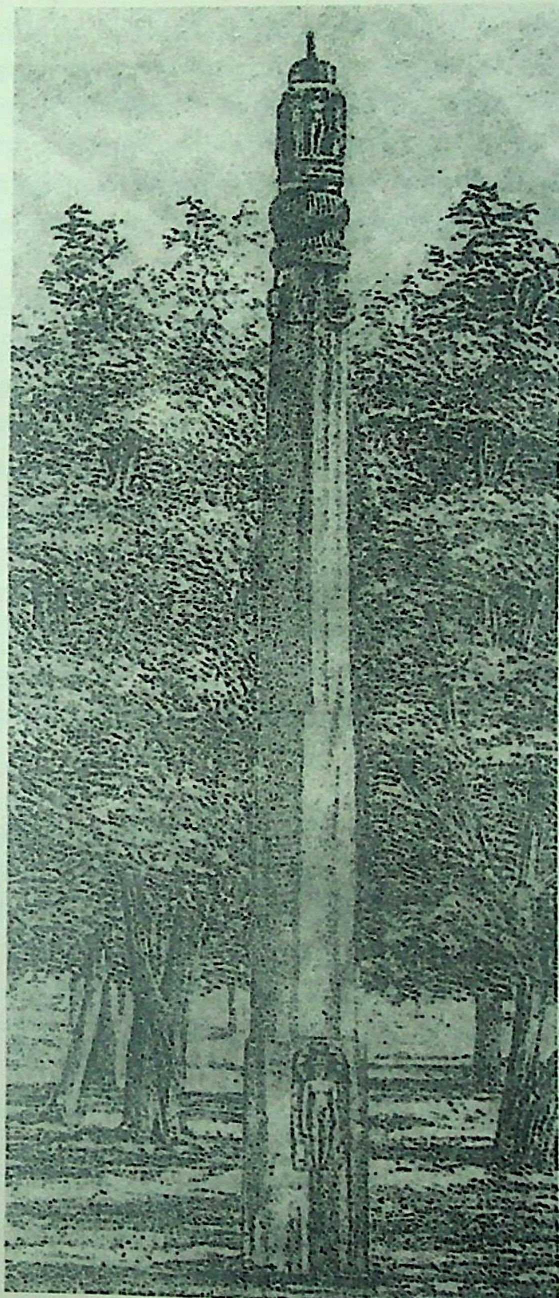
सिद्धार्थनृपतितनयो भारतवास्ये विदेहकुण्डपुरे।
देव्यां प्रियकारिण्यां सुस्वप्नान्संप्रदर्श्य विभुः ।। 4 ।।

चैत्रसितपक्ष फाल्गुनि शशंकयोगे दिने त्रयोदशाम्।
जझे स्वोच्चरथेषु ग्रहेषु सौम्येषु शुभलग्ने ।।5।।
हस्ताश्रिते शशांके चैत्रज्योत्स्ने चतुर्दशी दिवसे।
पूर्वाह्ने रत्नघटैर्विबुधे चन्द्राश्चक्रुरभिषेकम् ।।6।।

अर्थात् --सिद्धार्थ राजा के पुत्र ने भारत देश के **विदेह कुण्डपुर** में देवी प्रियकारिणी को सुखद स्वप्न दिखाए और देवी प्रियकारिणी ने चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को शशांक योग में फाल्गुनि नक्षत्र में अपने उच्च स्थानवाले सौम्य ग्रह और शुभ लग्न में (पुत्र) को जन्म दिया और चतुर्दशी के पूर्वाह्न में इन्द्रों ने रत्न घटों से (भगवान महावीर का) अभिषेक किया।[10]

④ ऊपर कहा जा चुका है कि आचार्य यतिवृषभ ने कषायपाहुड पर चूर्णिसूत्रों (चुण्णिसुत्त) लिखे थे। किंतु ये 5 वीं सदी में हुए ऐसा माना जाता है। कारण यह है कि इन्होंने भगवान महावीर के निर्वाण से 1000 वर्ष बाद के राजाओं के वंश, नाम आदि दिए हैं जो कि मौर्य वंश से लेकर गुप्त वंश तक के हैं। सबसे अंत में कल्कि राजा का उल्लेख है। इस राजा की पहिचान मिहिरकुल हूण से की गई है। उसने 40 वर्षों तक राज्य किया । उसका शासन काल बर्बरता, क्रूरता, धामिक स्थानों का विध्वंस आदि के लिए बदनाम है। वह स्कंदगुप्त से बारह वर्षों तक युद्ध ही करता रहा। अत में 473 ईस्वी में वह नरसिंहगुप्त के हाथों मारा गया।

स्कंदगुप्त द्वारा निर्मित एक स्तंभ का एक चित्र 'वैशाली दिग्दर्शन' में छपा है। स्तंभ बहुत ऊंचा है। उस पर कायोत्सर्ग में एक तीर्थंकर हैं। शिखर भी है। आश्चर्य की बात यह है कि स्तंभ के निचले भाग में कायोत्सर्ग में ही जमीन से कुछ उपर फणावली मंडित पार्श्वनाथ उत्कीर्ण हैं। चित्र 1893 में गैरिक ने लिया था और भारतीय पुरातत्व विभाग कलकत्ता में लिथो से छापा गया था। क्या वैशाली में अशोक ? स्तंभ भी स्कंदगुप्त ने ही महावीर की स्मृति में बनवाया था ? अनुसंधान होना चाहिए।



तिलोयपण्णत्ति जैन लोक रचना या जैन भूगोल का एक अत्यंत महत्वपूर्ण ग्रंथ है। वह **प्राकृत** में है। उसमें नौ अधिकार हैं--1 सामान्य जगत् 2 नारकलोक 3 भवनवास लोक 4 मनुष्य लोक 5 तिर्यक्लोक 6 व्यंतर लोक 7 ज्योर्लिोक 8 सुरलोक और 9 सिद्धलोक । उसके चतुर्थ अधिकार में तीर्थंकरों की जन्मभूमि आदि का वर्णन है। महावीर की जन्मभूमि के बारे में यतिवृषभ ने ऐसा **काव्य चातुर्य** दिखाया कि कुंडले का अर्थ कुण्डलपुर वालों ने उसका कुंडलपुर अर्थ झट से निकाल लिया । इसकी समीक्षा यहीं कुछ प्रास्ताविक के बाद

आचार्य यतिवृषभ भुलक्कड भी थे। इस तथ्य को उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है। पं. परमानंदजी शास्त्री[1] ने यह तथ्य इस प्रकार स्पष्ट किया है--"चूर्णिसूत्रों के अध्ययन से जहां आचार्य यतिवृषभ के अगाध पाण्डित्य और विशाल आगम ज्ञान का पता चलता है, वहीं उनकी स्पष्टवादिता का भी बोध होता है। चारित्र मोह क्षपणा अधिकार में क्षपक की प्ररूपणा करते हुए यव मध्य की प्ररूपणा करना आवश्यक था। पर वहां यव मध्य प्ररूपणा करने का उन्हें ध्यान नहीं रहा। किंतु प्रकरण की समाप्ति पर चूर्णिकार लिखते है--" जव मज्झं कायव्व, विस्तरिदुं लिहिदुं " (सू 979, पृ 840) यहां पर यव मध्य की प्ररूपणा करनी चाहिए थी। किंतु पहले क्षपण प्रायोग्य प्ररूपणा के अवसर में हम लिखना भूल गए। यह आचार्य यतिवृषभ की स्पष्टवादिता और वीतराग वृत्ति का निर्देशन है। " पृ 123

संभवतः कुछ पाठकों को यह समझ में नहीं आए। यह उद्धरण इसीलिए दिया है कि इस बात की संभावना की जा सकती है कि आचार्य कुण्डपुर के स्थान पर कुंडले लिख गए।

आचार्य यतिवृषभ ने अपना नाम देने में भी काव्य चातुर्य दिखाया है - आचार्यों तथा महाकवियों की प्राकृत, संस्कृत तथा अपभ्रंश में यही परिपाटी रही है कि वे अपना, अपने गुरु का नाम पहले लिखकर ग्रंथ का प्रारंभ करते आये हैं। किंतु शायद यतिवृषभजी ने सोचा होगा, मैं तो महालेखक हू, मैं क्यों सब की लाइन में लगूं ! इसलिए उन्होंने अपना नाम तिलोयपण्णत्ति के अंत में दिया है और उसमें भी विद्वानों के लिए अपना सिर खुजाकर सही अर्थ निकालने के लिए विवश कर दिया है। मानों पं.फूलचंदजी और पं. कैलाशचंदजी सही अर्थ के लिए लड़ें। आज के लेखक का नाम कोई अंत में लिख दे, तो वह मानहानि का दावा ही कर दे। अब अंतिम गाथा में आचार्य की कलाकारी देखते हैं। गाथा-

पणमह जिणवरवसहं गणवरवसहं तहेव गुणवसहं।
दट्ठूण परिवसहं जदिवसहं धम्मसुत्तपाठएवसहं ।। 9-76

अब कुंडलपुर का कोई एसा समर्थक जो प्राकृत नहीं जानता हो, वह इस गाथा में यतिवृषभजी का नाम ढूंढे। शायद नहीं बता पाएगा। संस्कृतवाले को भी शायद मुश्किल

होगी। फिर प्राकृत गाथा में कुंडले देखकर उसका कुंडलपुर कैसे कर लिया? कुछ नियम तो होगा।

यहां उक्त गाथा का अर्थ प्राकृत जाननेवाले दो विद्वानों द्वारा किया गया अनुवाद दिया जाता है।

"अर्थात् जिनवर वृषभ को, गुणों में श्रेष्ठ गणधर वृषभ को, तथा परिषहों को सहन करनेवाले, और धर्मसूत्र के पाठकों में श्रेष्ठ ऐसे यतिवृषभ को नमस्कार करो।" (नाथूराम प्रेमी [2])

"जिनवर वृषभ को, गुणों में श्रेष्ठ गणधर वृषभको, तथा परिषहों को सहन करने व धर्मसूत्र के पाठकों में श्रेष्ठ यतिवृषभ को देखकर नमस्कार करो। (पं. कैलाशचंदजी)

अब पाठक स्वयं बताएं कि लगभग 1700 वर्ष पूर्व हुए यतिजी तो अब दिखते नहीं । किसे नमस्कार करें। दट्ठूण का अर्थ लिखना जरूरी था।

पं. कैलाशचंदजी[3] आगम ग्रंथों में गहरा गोता लगानेवाले जीव थे। वे तिलोय. की धवला नाम की टीका (exposition) में से सही गाथा ढूंढ लाए। उन्होंने शुद्ध गाथा दी है-

पणमह जिणवरवसहं गणवरवसहं गुणहरवसहं।
दुसहपरीसहविसहं जइवसहं धम्मसुत्तपाठरवसहं।।

"जिनवर वृषभ को, गणधर वृषभ को, और श्रेष्ठ गुणधराचार्य को तथा दुःसह परीषह को सहनेवाले और धर्मसूत्र के पाठकों में श्रेष्ठ यतिवृषभ को नमस्कार करो।"

यहां वृषभ के दो अर्थ हैं-1 वृषभदेव और 2 श्रेष्ठ । इसी प्रकार "जइवसहं " के भी दो अर्थ हैं-1 यति या मुनियों में श्रेष्ठ ऋषभदेव और 2 स्वयं यतिवृषभाचार्य । दीक्षा गुरू ने उन्हें यतिवृषभ नाम दे दिया, तो उन्हें विद्वानों को चक्कर में डालने का मौका मिल गया !

गुणधराचार्य के कषायपाहुड़ पर यतिजी ने चूर्णिसूत्र लिखे हैं, अतः उन्हें नमस्कार।

अब यदि कुंडलपुर वाले कुंडले का अर्थ गलत निकालें, तो आश्चर्य की बात नहीं। कुंडल का एक अर्थ गोल चक्कर भी होता है। प्रस्तुत लेखक तो कंप्यूटर पर प्राकृत टाइप करने के चक्कर से मुश्किल से निकला। एक एक अक्षर दो बार चेक करना पड़ा हालांकि वह अनपढ़ नहीं है। (तीन एम. ए. करने के बाद उसे आप अनपढ़ शायद नहीं कहेंगे।)

एक और काव्य-चातुर्य-यतिवृषभाचार्य का--अपने ग्रंथ के अंत में उन्होंने यह गाथा दी हे-

चूण्णिसरूवछक्करणसरूवपमाण होइ जं तं।
अट्ठसहस्सपमाणं तिलोयपण्णत्तिणामाए ।। 9-77

"चूर्णिस्वरूप तथा षट्करण स्वरूप का जितना प्रमाण है, तिलोयपण्णत्ति का भी उतना आठ हजार श्लोक परिमित है।" इस गाथा में चूर्णियों की जिनकी संख्या धवला में 6000 बतलाई गई है, और यतिजी ने षट्करण नामक अपने ग्रथ के श्लोकों की कुल संख्या मिलाकर 8000 बताई है किंतु कुछ असावधान लेखक जिनमें तिलोय के अनुवादक भी हैं, यह सूचना झट से दे देते है कि तिलोय में आठ हजार श्लोक हैं। मूल ग्रंथ प्राकृत में है और उसमें गद्य और पद्य दोनों हैं। यहां भी ऐसे लोग पाठकों को गलत अर्थ बताते हैं। षट्करण अभी संभवतः उपलब्ध नहीं है। उसमें गणित सूत्र होंगे। किंतु इस गाथा से यह पता चलता है कि तिलोय के साथ महाभारत के समान छेड़छाड़ की गई है। उसमें लोग श्लोक लिखकर जोड़ते चले गए । अब मालूम ही नहीं पड़ता कि महाभारत का मूल रूप क्या था । कहीं कु छ लोग उत्साह में आकर अपनी ओर से कुछ गाथाएं या श्लोक तिलोय में भी नहीं जोड़ दें। मुनियों को सावधान रहना चाहिए। वे अपनी श्रेणी के आचार्य के ग्रंथ को भ्रष्ट नहीं होने दें। इस संबंध में सावधान रहने की अत्यंत आवश्यकता है।

तिलोयपण्णत्ति में मिलावट--नाथूरामजी प्रेमी ने लिखा है कि आजकल तिलोयपण्णत्ति का जो संस्करण मिलता है, उसमें 9340 गाथाएं या श्लोक हैं। गणित हुआ 9340-6000= **3340 की मिलावट।**

तीर्थंकर महावार और उनकी आचार्य परंपरा भाग 2 ग्रंथ में नेमिचंद्र ज्योतिषाचार्य ने पृ 86 पर लिखा है,"अतएव इतिहास के आलोक में यह निस्संकोच माना जा सकता है कि तिलोयपण्णत्ति की 4-1474-1496 व 4- 1499-1506 तथा उसके आगे की गाथाएं अन्य किसी व्यक्ति द्वारा निबद्ध की गई हैं। निश्चय ही ये गाथाएं ई.सन् 500 के लगभग की प्रक्षिप्त हैं।"

मिलावट करनेवालो में से एक का नाम--पं.कैलाशचंदजी ने लिखा है- "तिलोयपण्णत्ति के चौथे अध्याय में जहां चौबीस तीर्थंकरों के निर्वाण का कथन समाप्त होता है, वहां एक पद्य इस प्रकार है--

घोरट्ठकम्मणियरे दलिदूण लब्धं णिस्सेयसा जिणवरा जगवंदणिज्जा।
सिद्धि दिसंतु तुरिदं सिरिवालचंद सिद्ध तिअप्प भव्यजणाणं सव्वे।।

"जिन्होंने घोर अष्ट कर्मों के समूह को नष्ट करके निःश्रेयस पद को प्राप्त कर लिया है और जगत के वंदनीय हैं, ऐसे वे सर्व जिनेंद्र शीघ्र ही श्री बालचंद सैद्धांतिक आदि भव्य जीवों को मुक्ति प्रदान करें।" पंडितजी ने आगे लिखा है कि बालचंद नाम के अनेक आचार्य हुए हैं । इसलिए किस बालचंद ने कौनसी गाथा घुसा दी यह कहना कठिन है।

तिलोयपण्णत्ति आचार्य यतिवृषभ की मौलिक रचना नहीं है--तिलोय एक संग्रह ग्रंथ (compilation) है। आचार्य ने उसमें अनेक ऐसी रचनाओं का उल्लेख किया है जो वर्तमान में उपलब्ध नहीं हैं। कुछ के नाम हैं-प्राकृत में लोकविभाग, संगायणी जिसके गंगा नदी के विस्तार से यतिजी ने अपने कथन से मतभेद बतलाया है। लोकविनिश्चय जिसका उपयोग आचार्य अकलंकदेव ने तत्वार्थवार्तिक में लोक रचना संबंधी अपने ग्रंथ में किया है। **कुछ की जिम्मेदारी यतिवृषभजी ने जिनेंद्र भगवान पर डाल दी है।** उदाहरण के लिए निम्न दो गाथाएं देखिए---

पीढत्तयस्स सोवाणं चउदिसासु पत्तेकं।
अट्ठ चउ चउ पमाणं जिण-जाणिंद-दीह वित्थारा।। 779।।
पढमाणं बिदियाणं , वित्थारं माणथंभ पीढाणं।
जाणेदि जिणेंदो त्ति य, उच्छिण्णा अम्ह उवएसो।।780।।

अर्थ- चारों दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में इन तीनों पीठों की सीढियों का प्रमाण क्रमशः आठ, चार और चार है। इन सीढियों की लंबाई और विस्तार जिनेंद्र ही जानते हैं।।779।।

अर्थ--प्रथम और द्वितीय मानस्तंभ पीठों का विस्तार जिनेंद्र ही जानते हैं। हमारे लिए तो इनका उपदेश ही नष्ट हो चुका है। 780।।

(ये गाथाएं और उनका अर्थ विशुद्धमति माताजी द्वारा संपादित तिलोय से लिया गया है। वर्णन है समवसरण की सीढियों का)

पाठक स्वयं समझ सकते हैं कि यतिजी ने जो कुछ लिखा है, वह बहुत कुछ प्राचीन ग्रंथों के आधार पर लिखा है जो अब उपलब्ध नहीं हैं, कुछ उन्हें ही समझ में नहीं आए थे। यह संभावना भी है कि यतिजी ने कुछ कथन ज्यों के त्यों लिख दिए हैं और उनका अर्थ उनके तत्काल बाद के या तिलोय का अनुवाद जैसा ही करनेवाले हरिवंशपुराण या जयधवला टीका से स्पष्ट किया जा सकता है। यह प्रयत्न है तो कठिन ही किंतु जिनेंद्र देव या उनके शासक देव प्रेरणा देकर रास्ता निकाल ही देंगे। शुभं भूयात्।

यतिजी ने णमोकार मंत्र ही बदल दिया है---आजकल जो णमोकार मंत्र प्रचलित है, उसमें अरिहंतों को सबसे पहले नमस्कार किया जाता है किंतु यतिजी ने सिद्धों को सबसे पहले नमस्कार किया है। देखिए तिलोय की पहली गाथा---

अट्ठ-विह-कम्म-विदला, णिट्ठिय-कम्म-कज्जा पणट्ठ-संसारा।
दिट्ठ ययलत्थ - सारा, सिद्धा सिद्धि मम दिसंतु।।1-1

अर्थ- आठ प्रकार के कर्मों से रहित, करने योग्य कार्यों को कर चुकनेवाले, संसार को नष्ट कर देनेवाले और सम्पूर्ण पदार्थों के सार को देखनेवाले, सिद्ध परमेष्ठी मेरे लिए सिद्धि प्रदान करें। आगे की गाथाओं में णमोकार का ही क्रम है।

मंगल शब्द की निरुक्ति बताते हुए उन्होंने गाथा संख्या 1-9 में कहा है---

गालयति विणासयदे घादेदि दहेदि हंति साधयदे।
विद्धंसेदि मलाइं , जम्हा तम्हा य मंगलं भणिदं।।

अर्थ- क्योंकि यह मल को गालता है, विनष्ट करता है, घातता है, दहन करता है, मारता है, शुद्ध करता है, इसीलिए मंगल कहा गया है। यहां तक तो ठीक किंतु 1-8 गाथा में जो कहा गया है, वह कुछ उलझन में डालनेवाला कथन है।

पूण्णं पूद पवित्ता पसत्थ -सिव-भद्द-खेम कल्याणा।
सुह-सोक्खादि सव्वे णिदिट्ठा मंगलस्स पवज्जाया।।

अर्थ-- पुण्य, पूत, पवित्र, प्रशस्त, शिव, भद्र, क्षेम, कल्याण, शुभ और सौख्यादि सब शब्द मंगल के ही पर्यायवाची या समानार्थक कहे गए हैं।

अब जरा सोचिये कि मुख्य अर्थ गालयति का है । उक्त 10 पर्यायों में से गालयति अर्थ किस प्रकार निकाला जा सकता है। यह संभव है कि आचार्य विद्यानंदजी के प्रखर प्रतिभावाले शिष्य श्रुतसागरजी या आचार्य विद्यासागरजी के पुरातत्वप्रवीण शिष्य सिद्धांतसागरजी या सुधासागरजी इन पर्यायों से मंगल का मूल अर्थ गालयति निकालने में कठिनाई का अनुंभव करें । क्रिसी ने शिवजी का अर्थ चला दिया तो फिर ?

तात्पर्य यह है कि यतिजी ने किसी प्राचीन ग्रंथ में यह गाथा देखी होगी और ज्यों की त्यों उतार दी जैसा कि कुंडले के मामले में हुआ है। अन्यथा वे मंगल के इतने पर्याय शायद नहीं देते। उन्होंने शायद तत्काल का घ्यान नहीं रखा। इस बात की भी संभावना है कि किसी मिलावट करनेवाले ने यह गाथा लिख दी।

आचार्य यतिजी ने चौबीस तीर्थंकरों के जन्मस्थान लिखे हैं--ऋषभदेव से प्रारंभ कर महावीर स्वामी तक के 24 तीर्थंकरों के जन्मस्थान, माता-पिता, जन्म तिथि एवं जन्म नक्षत्रों के नाम 24 गाथाओं में दिए हैं। किंतु भगवान महावीर के जन्म स्थान संबंधी निम्न गाथा ने कुछ उलझन पैदा कर दी है। इस गाथा में भी आचार्य ने अपना काव्य चातुर्य दिखाया है। यह गाथा निम्न प्रकार है---

सिद्धत्थराय -पियकारिणीह णयरम्मि कुंडले वीरो।
उत्तरफग्गुणि-रिक्खे चेत्त -सिद तेरसीए उप्पण्णो ।। 4-536।।

(महावीर स्वामी के) पिता राजा सिद्धार्थ, नगरी "कुंडले" में वीर प्रभु का जन्म, उस समय उत्तर फाल्गुणी नक्षत्र था और चैत्र सुदी तेरस के दिन उनका जन्म हुआ था। भोले भव्य जीवों को भ्रम में डालनेवालों ने और अपनी तत्कालीन जानकारी के अनुसार अनुवादक ने कुंडले का अनुवाद झट से एक ही झटके में बिना इस बात का विचार किए कि गाथा प्राकृत में है और उसका अर्थ प्राकृत के नियमों के अनुसार ही करना चाहिए।

प्रसंगानुसार इस गाथा या श्लोक का अर्थ निकालने के लिए निम्न पर ध्यान दें----
(1) कुंडले से पहले णयरम्मि लगा है। इसमें णयर का संस्कृत में नगर अर्थ होता है। म्मि प्राकृत का सप्तमी विभक्ति का चिन्ह है। वह जिस शब्द के साथ लगता है उसका अर्थ 'में' होता है। अतः णयरम्मि का अर्थ हुआ कुंडले नामवाले नगर में । बहुत से लोग णयरम्मि को भूल जाते हैं।

(2) अब तिलोय में ढूंढते हैं कि यतिजी ने तीनों लोक का जो वर्णन किया है, उसमें कुंडले नाम का कोई नगर है या नहीं। प्रस्तुत लेखक ने बडी पैनी निगाह से विशुद्धमति माताजी द्वारा संपादित तिलोय संस्करण के लगभग 2000 पृष्ठ देखे। उनमें कुण्डल से संबंधित ये शब्द मिले---कुंडल द्वीप, कुंडल शैल, कुंण्डलवर द्वीप, कुण्डल पर्वत , कुण्डल गिरि। **कुंडलपुर कहीं भी नहीं मिला। हां, 'कुण्डला' शब्द अवश्य मिला।** पाठक इतना तो जानते ही हैं कि भगवान महावीर का जन्म विदेह के कुण्डपुर नगर में हुआ था न कि इन द्वीपों या पर्वतों पर। कुण्डला का विवेचन अगले पैरा में किया जाएगा। वर्तमान कुण्डलपुर का नाम ब्राह्मणों का दिया हुआ नाम है। वे यह मानते थे कि रुक्मिणी यहीं की थी और कृष्ण के साथ छिपकर भाग गई थी। किंतु वह विदर्भ की थी और वहीं वर्धा के निकटस्थ एवं अभी भी वर्तमान कुंडलपुर की रहनेवाली थी। ब्राह्मण भी रुक्मिणी का जन्म स्थान उसी प्रकार भूल गए जिस प्रकार तुरुष्कों के आक्रमणों से वैशाली से भागे जैनियों ने कुण्डपुर को भुला दिया। आज के कुण्डलपुर के आसपास जो खंडहर हैं, वे नालंदा बौद्ध विश्वविद्यालय के छात्रावासों के खंडहर हैं। अनुश्रुति है कि नालंदा में जैन सिद्धांतों के विरुद्ध बौद्ध आचार्यों के आक्षेपों का अध्ययन करने के लिए जैन विद्यार्थी भी नालंदा आते थे। इनमें **अकलंक देव** का नाम भी लिया जाता है। आचार्य अकलंकदेव ने भी कुंडला का ही उल्लेख तत्वार्थवार्तिक ग्रंथ में किया है, कुण्डलपुर का नहीं। उन्होंने लोकविनिश्चय नामक प्राचीन ग्रंथ का उपयोग किया था। यदि कुंडलपुर भगवान का जन्म स्थान होता, तो वे उसका उल्लेख अवश्य करते। अकलंक देव का बौद्धों से संघर्ष प्रसिद्ध है। उनका समय 720-780 के बीच आंका गया है।

(3) अब देखते हैं कि कुण्डले रूप कैसे बना। प्राकृत में 'आ' से अंत होनेवाले शब्दों के रूप प्रायः ह्रस्व अकारान्त शब्दों के समान ही चलते हैं। (नेमिचंद्र ज्योतिषाचार्य, अभिनव प्राकृत व्याकरण, पृ 154) जिण -जिने, कुण्डला-कुण्डले। इस प्रकार **मूल शब्द कुण्डला** है। उसका उल्लेख यतिजी ने इस प्रकार किया है। जंबूद्वीप में सात प्रवर या श्रेष्ठ

जनपद हैं (तस्सि जंबूदीवे सत्त-चिय होंति जणपदा पवरा) गाथा 92। अगली गाथा 93 में जनपदों के नाम दिए हैं। उनमें **विदेह** का नाम भी है। आचार्य ने विदेह के 32 क्षेत्रों के नाम गिनाए हैं। उनमें सुवत्सा (सुवप्पा) नामक एक क्षेत्र है जिसकी बड़ी प्रशंसा की गई है। पुव्व (पूर्व) विदेह के वर्णन में सुवत्सा क्षेत्र में **कुण्डला** नगरी का नाम दिया है। गाथा संख्या 2324। इसके अतिरिक्त भरत क्षेत्र में 60 प्रमुख नगरियां भी बताई गई हैं, उनमें **सिद्धत्थपुर -सिद्धार्थपुर** का नाम भी है।

इन संक्षिप्त गाथा संदर्भों से यह निष्कर्ष निकलता है कि (1) राजा विशाल के गढ़ से वैशाली नाम धारण करने से पूर्व वैशाली क्षेत्र का नाम सुवत्सा था। (2) सुवत्सा देश की राजधानी कुण्डला थी। यह नाम बोलने में कम प्राणवायु ले या मधुर लगे इसलिए कुण्डपुर कहा जाने लगा होगा। प्राचीन ग्रंथों में ये दोनों ही नाम आए होंगे । इसीलिए आचार्य ने उन्हें ज्यों का त्यों लिख दिया। न केवल यतिजी ने अपितु अकलंक देव ने भी सुवत्सा और कुण्डला का ही उपयोग किया है। उन्होंने तिलोय की नकल नहीं मारी । उनके सामने वह नहीं थी। उनका कथन अब अनुपलब्ध प्राचीन ग्रंथ लोकविनिश्चय के अनुसार है। सिद्ध है कि महावीर जन्म स्थान के लिए कुण्डला नाम ही चलता होगा विशेषकर प्राचीन ग्रंथों के युग में । इसलिए **कुण्डले का अर्थ कुण्डलपुर करना सर्वथा गलत है।**

तिलोय का लिखना समाप्त करते समय यतिजी को यह विचार संभवतः आया कि मैंने कुछ ऐसा भी लिख दिया है कि जो लोगों की समझ में ठीक से नहीं आए ! इसलिए उन्होंने लिखा भैया, मैंने तो वात्सल्य भाव से लिखा है। जो समझ में न आए, उसे विद्यानंदजी या विद्यासागरजी या पुष्पदंतजी जैसे आचार्यों से अपनी कॉपी जंचवा लेना। वे तुम्हारे हेडमास्टर हैं। यह गाथा सबसे आखिर की है। (गाथाओं के नंबर दे दिए हैं। देखना हो तो तिजारा से सस्ती तिलोय मिल जाएगी, नारेबाजी करने वालों से सावधान भी हो सकेंगे।)

हरिवंशपुराण में तीर्थंकरों के जन्म स्थान आदि का वर्णन तिलोय की तर्ज पर

उक्त पुराण में तीनों लोकों का जो संक्षिप्त वर्णन है, वह तिलोय के अनुसार है। कोई भी मिलाकर देखले। यतिजी ने तीर्थंकरों के माता-पिता, जन्मनक्षत्र, चैत्य वृक्ष और निर्वाणभूमि का कथन 24 प्राकृत गाथाओं में किया है। जिनसेनाचार्य प्रथम (8 वीं सदी) ने संस्कृत में लिखित हरिवंशपुराण के 60 वें सर्ग में श्लोक सं. 182 से 205 तक सभी तीर्थंकरों संबंधी उक्त विवरण दिया है। महावीर से संबंधित श्लोक निम्न प्रकार है--

शालः **कुण्डपुरं वीरः** सिद्धार्थः प्रियकारिणी ।
उत्तराफाल्गुनी पावा पापानि ध्वन्तु वः सदा।।60-205।।

अर्थ-- शाल वृक्ष, कुण्डपुर नगर, वीर (जिनेंद्र) सिद्धार्थ पिता, माता प्रियकारिणी, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र और पावापुरी निर्वाणक्षेत्र ये सब सदा तुम्हारे पापों को नष्ट करें।

गणराजा सिद्धार्थ ने महावीर का बर्थडे मनाया था--जिनसेन ने यह भी उल्लेख किया है कि पिता सिद्धार्थ ने भगवान महावीर का **जन्मोत्सव** किया था।

कलिंग देश में उग्र वंश का वर्णन करते हुए गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से निम्न प्रकार कहते हैं---

भवान्न किं श्रेणिक वेत्ति भूपतिं नृपेन्द्रसिद्धार्थकनीयसीपतिम्।
इमं प्रसिद्धं जितशत्रुमाख्या प्रतापवन्तं जितशत्रुमण्डलम् ।।66-6।।
जिनेंद्रवीरस्य समुद्भवोत्सवे तदागतः कुण्डपुरं सुहृत्परः।
सुपूजितः कुण्डपुरस्य भूभृता नृपोऽयमाखण्डलतुल्यविक्रमः।।66-7।।
यशोदयायां सुतया यशोदया पवित्रया वीरविवाह मंगलम्।
अनेककन्यापरिवारयारुहत्समीक्षितुं तुंगमनोरथं तदा।।66-8।।
स्थितेऽथ नाथे तपसि स्वयंभुवि प्रजातकैवल्यविशाललोचने।
जगद्विभूत्यै विहरत्यपि क्षितिं क्षितिं विहाय स्थितवांस्तपस्ययम्।।66-9।।

अर्थ--हे राजन् श्रेणिक, क्या तुम इस जितशत्रु को नहीं जानते ? जिसके साथ भगवान महावीर के पिता राजा सिद्धार्थ की छोटी बहिन का विवाह हुआ है, जो अत्यंत प्रतापी और शत्रुओं के समूह को जीतनेवाला है। जब भगवान महावीर का जन्मोत्सव हो रहा था, तब यह कुण्डपुर आया था और कुण्डपुर के राजा सिद्धार्थ ने इन्द्र के तुल्य पराक्रम को धारण करनेवाले इस मित्र का अच्छा सत्कार किया था। इसकी यशोदा रानी से उत्पन्न यशोदा नामक पवित्र पुत्री थी। अनेक कन्याओं से सहित उस यशोदा का भगवान महावीर के साथ विवाह मंगल देखने की वह उत्कट अभिलाषा रखता था। परंतु स्वयंभू भगवान महावीर तप के लिए चले गये और केवलज्ञानरूपी विशाल नेत्र प्राप्त कर जगत का कल्याण करने के लिए पृथ्वी पर विहार करने लगे, तब वह (जितशत्रु) स्वयं भी पृथ्वी को छोड़ तप में लीन हो गया।

भगवान महावीर ने भी नेमिनाथ की तरह विवाह नहीं किया और वन की राह ली।

यतिजी ने तीर्थंकरों के पारणा संबंधी सूचना दी--- आचार्य ने गाथा संख्या 678 में तीर्थंकरों के पारणा विषयक जानकारी निम्न प्रकार दी है--

एक्क वरिसेण उसहो, उच्छुरसं कुणइ पारणं अवरे।
गो-खीरे णिप्पण्णं अण्णं बिदियम्मि दिवसम्मि ।।678।।

अर्थ--भगवान ऋषभदेव ने एक वर्ष में इक्षुरस का पारणा किया था और इतर तीर्थंकरों ने दूसरे दिन गो-क्षीर में निष्पन्न अन्न (खीर) का पारणा किया था।

यतिजी उन स्थानों के नाम भूल गए या आलस्य कर गए ! जहां शेष तीर्थंकरों ने पारणा किया था। इसकी पूर्ति की जिनसेनाचार्य प्रथम ने हरिवंशपुराण में । श्लोक हैं--

वर्षेण पारणाद्यस्य जिनेंद्रस्य प्रकीर्तिता।
तृतीयदिवसेऽन्येषां पारणाः प्रथमा मताः।।60-237।।
आद्येनेक्षुरसो दिव्यःपारणायां पवित्रितः ।
अन्यैर्गोक्षीरनिष्पन्नपरमान्नमलालसैः ।।60-238

अर्थ--श्री आदिजिनेंद्र का प्रथम पारणा एक वर्ष में, मल्लिनाथ और पार्श्वनाथ का चौथे दिन तथा शेष तीर्थंकरों का पारणा तीसरे दिन हुआ था। भावार्थ--आदि जिनेंद्र ने छह मास का योग लिया था और छह मास विधि न मिलने से भ्रमण करते रहे इसलिए एक वर्ष बाद उन्हें आहार मिला था। मल्लिनाथ और पार्श्वनाथ ने दीक्षा के समय तीन दिन के उपवास का नियम लिया था इसलिए उन्हें चौथे दिन आहार मिला और शेष तीर्थंकरों ने दो दिन का उपवास किया था। पारणा नगरियों के नाम--

श्रीहास्तिनपुरं रम्यमयोध्यानगरी शुभा ।
श्रावस्ती च विनीता च परं विजयपूर्वकम्।।60-239।।
पुरं मंगलकं नाम्ना पाटलीखण्डसंज्ञकम्।
पद्मखण्डपुरं कान्तं तथा श्वेतपुरं परम्।। 60-240।।
अरिष्टपुरमिष्टं तु सिद्धार्थपुरमप्यतः।
महापुरमतो नाम्ना स्फुटं धान्यवटं पुरम् ।। 60-241।।
वर्धमानपुरं ख्यातं पुरं सौमनसाह्वयम् ।
मन्दरं हास्तिनपुरं तथा चक्रपुरं मतम्।।60-242
मिथिला राजगृहकं पुरं वीरपुरं तथा।
पुरी द्वारवती काम्यकृतं कुण्डपुरं पुरम्।।60-243।।
वर्तुर्विंशतिसंख्यानां संख्यातानि यथाक्रमम् ।
जिनानां वृषभादीनां पारणानगराणि तु ।।60-244।।

अर्थ---1 श्री सुन्दर हस्तिनापुर 2 शुभ अयोध्या 3 श्रावस्ती 4 विनीता 5 विजयपुर 6 मंगलपुर 7 पाटलीखण्ड 8 पद्मखण्डपुर 9 श्वेतपुर 10 अरिष्टपुर 11 सिद्धार्थपुर 12 महापुर 13 धान्यवटपुर 14 वर्धमानपुर 15 सोमनसपुर 16 मन्दरपुर 17 हस्तिनापुर 18 चक्रपुर 19 मिथिला 20 राजगृह 21 वीरपुर 22 द्वारवती 23 काम्यकृति और 24 कुण्डपुर ये यथाक्रम से वृषभ आदि चौबीस तीर्थंकरों के प्रथम पारणा के नगर प्रसिद्ध हैं।

भगवान महावीर का दीक्षा कल्याणक--

वृषभस्य विनीतायां परिनिष्क्रमणं तथा।
नेमेस्तु द्वारवत्यां तु शेषाणां **जन्मभूमिषु**।।60-215।।
अन्येषामपराह्ने तां **वीरो ज्ञातृवने**ऽश्रयत् ...60-218।।

अर्थ-- भगवान वृषभदेव का दीक्षाकल्याणक विनीता में, नेमिनाथ का द्वारवती में, और शेष तीर्थंकरों का अपनी -अपनी जन्मभूमि में हुआ था। और .... **भगवान महावीर** का दीक्षा स्थान ज्ञातृवन में था। श्लोक संख्या 237 में अन्यैः द्वारा यह भी उल्लेख है कि वीर ने दो दिन का उपवास किया था। (उसके बाद ही उन्होंने **कुण्डपुर में आहार** लिया था)

तिलोय और उसका अनुसरण करनेवाले हरिवंश का तुलनात्मक अध्ययन करने से यह स्पष्ट है कि **महावीर स्वामी के जन्म आहार आदि कुण्डपुर में ही संपन्न हुए थे।**

⑤ **रविषेणाचार्य** ने महावीर स्वामी के निर्वाण के 1203 वर्ष 6 माह बाद संस्कृत पद्मचरित की रचना की थी। इसमें बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रत के तीर्थ में हुए राम का चरित वर्णित है। उक्त रचना में 123 पर्व या सर्ग हैं। कवि का कथन है कि राम कथा वर्धमान ने इन्द्रभूति गणधर को विपुलाचल पर्वत पर सुनाई और उनसे सुधर्म ने सुनी तथा उनसे जंबू स्वामी ने, और उनके बाद की आचार्य परंपरा से कवि को प्राप्त हुई। कथा में श्रेणिक गौतम गणधर से प्रश्न करते हैं कि क्या कुंभकर्ण सोता ही रहता था और क्या उसे मस्त हाथी भी नहीं जगा पाते थे इत्यादि । कथा में लक्ष्मण, सीता, रावण आदि का कथन है। कुछ अन्य कथाएं भी हैं। राम को पद्म मुनि के रूप में भी बताया गया है।

महाकवि ने 29 वें पर्व में ऋषभदेव से प्रारंभ कर महावीर भगवान तक जिनचक्रियों के जन्मस्थान, माता-पिता, चैत्यवृक्ष, नक्षत्र, और निर्वाण स्थान का उल्लेख किया है। पार्श्वनाथ के बाद का श्लोक इस प्रकार है ---

शालः कुण्डपुरं पावा सिद्धार्थः प्रियकारिणी ।
हस्तोत्तरं महावीरं परमं तव मंगलम् ।।20-60।।

अर्थ--शाल (वृक्ष जिनका चैत्य वृक्ष था), कुण्डपुर (जिनका **जन्मस्थान** था), पावा (में जिन्होंने निर्वाण प्राप्त किया था), सिद्धार्थ (जिनके पिता थे), प्रियकारिणी (जिनकी माता थीं) हस्तोत्तर (नक्षत्र में जिनका जन्म हुआ था), (ऐसे) महावीर तुम्हारा परम मंगल करें।

रविषेणाचार्य ने भी कुण्डपुर को ही महावीर का जन्मस्थान बताया है, न कि कुंडलपुर को जिसका धुंआधार प्रचार आर्यिकाएं कर रही हैं।

⑥ **आठवीं सदी के जिनसेनाचार्य प्रथम ने हरिवंशपुराण मे महावीर का संपूर्ण जीवन वृत्त ही दिया है**--उक्त पुराण के द्वितीय सर्ग का प्रारंभ ही विदेह क्षेत्र, कुण्डपुर और महावीर के जन्म से होता है। संबंधित श्लोक निम्न प्रकार हैं--

अथ देशोस्ति विस्तारो जम्बूद्वीपस्य भारते।
विदेह इति विख्यात:स्वर्गखण्डसम: श्रिया।। 2-1।।
तत्राखण्डलनेत्रालीपद्मिनीखण्डमण्डलम् ।
सुखाम्भ:कुण्डमाभाति नाम्ना कुण्डपुरं पुरम् ।।2-5।।
एतावतैव पर्याप्तं पुरस्य गुणवर्णनम् ।
स्वर्गावतरणे तद्यद्वीरस्याधारतां गतम्।।2-12।।

अर्थ-- अथनन्तर इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में लक्ष्मी से स्वर्ग की तुलना करनेवाला, **विदेह** इस नाम से प्रसिद्ध एक बड़ा विस्तृत देश है।2-1। उस विदेह देश में **कुण्डपुर** नाम का एक ऐसा सुंदर नगर है जो इन्द्र के नेत्रों की पंक्तिरूपी कमलिनियों के समूह से सुशोभित है। 2-5। इस नगर के गुणों का वर्णन तो इतने से ही पर्याप्त हो जाता है कि वह नगर स्वर्ग से अवतार लेते समय **भगवान महावीर** का आधार हुआ--भगवान महावीर वहां स्वर्ग से आकर अवतीर्ण हुए। 2-12। (अनुवाद हरिवंशपुराण के अनुसार)

तिलोय प्रकरण के अंत भाग में हरिवंशपुराण से निम्नलिखित देखिए।

1 महावीर का जन्मस्थान,

2 महावीर का जन्मोत्सव Bitthday celebrations जिसमें महावीर के फूफाजी सम्मिलित हुए थे,

3 महावीर का दीक्षावन (ज्ञातृवन या नाथवन),

4 भगवान का दो दिन का उपवास,

5 महावीर का प्रथम पारणा--कुण्डपुर में।

आर्यिका ज्ञानमतीजी ने दूसरे सर्ग के वैशाली संबंधी श्लोक तो दिए हैं किंतु पाठकों के उपकार के लिए यह नहीं बताया कि ये किस ग्रंथ के हैं। खैर, ये श्लोक हरिवंशपुराण के हैं, इसका पता चल गया। किंतु आ.चंदनामतीजी ने यह सूचना दी है कि यहां "विदेह के वर्णन से पूरा बिहार प्रान्त है पृ.19" यदि कोई इस पुराण का हिंदी अनुवाद ही पढ़ ले,.तो उसे सत्य-असत्य का ज्ञान हो जाएगा।

⑦ छक्कखंडागम (प्राकृत) षट्खंडागम (संस्कृत) धवला टीका--जिनागम का संभवतः सबसे प्राचीन ग्रंथ। कर्ता-आचार्य पुष्पदंत और भूतबलि। यह बताया चुका है कि आचार्य धरसेन (विक्रम की दूसरी सदी का प्रारंभ) ने इन दो आचार्यों की दो विद्याओं को सिद्ध करने में कुशलता की परीक्षा ली थी और महिमा नगरी के मुनि सम्मेलन को पत्र लिखकर महाकम्मपयडिपाहुड (प्राकृत) महाकर्मप्रकृतिप्राभृत (संस्कृत) कर्म संबंधी महत्वपूर्ण सिद्धांत ग्रंथ का ज्ञान उनके बाद लुप्त न हो जाए, इसलिए गिरनार पर्वत की गुफा (अब यह गुफा बाबा प्यारा का मठ कहलाती है) पर बुलाया था और उन्हें यह ग्रंथ पढ़ाया था। पुष्पदंत ने इस रचना के एक भाग की रचना द्रमिल देश में और भूतबलि ने शेष भाग का लेखन वनवास देश (उत्तर कर्नाटक का प्राचीन नाम) में किया था।

आचार्य धरसेन का समय वीर निर्वाण के 614 के बाद, डॉ.ज्योतिप्रसाद के अनुसार ईस्वी 73-106, आ. पुष्पदंत -ईस्वी 50-80 और आ. भूतबलि - ईस्वी 66-90 में हुए हैं। षट्. के 6 खंड हैं-1 जीवस्थान -में संसारी जीव की विविध स्थिति का वर्णन, 2 खुद्दाबंध (क्षुद्रकबंध) नारकी, तिर्यंच, मनुष्य और सिद्धों में बंधक स्थिति का कथन, 3 में बंधसामित्य या बंधस्वामित्व- किस जीव को कितनी प्रकृतियों का कहां तक बंध होता है, 4 वेदना-कर्मों की वेदना किस प्रकार उत्कृष्ट या जघन्य होती है। इस खंड में महावीर के जन्मस्थान का प्रसंग है। 5 नाम कर्म, तपकर्म, भावकर्म आदि का वर्णन, 6 कर्म परमाणुओं का फल कब मिलता है इत्यादि का कथन है।

भाषा और शैली--**भाषा प्राकृत मिश्रित संस्कृत या मणिप्रवाल शैली है। कथन प्रश्नोत्तर शैली में भी है।** पाठकों को ये तथ्य ध्यान में रखना चाहिए।

आचार्य वीरसेन ने षट् की धवला टीका ईस्वी 816 में वाटग्राम (बडोदा) में पूर्ण की। उसमें 72,000 श्लोक हैं। आचार्य ने **बीस से भी अधिक ग्रंथों का उपयोग किया है।** इनमें तिलोय भी सम्मिलित है। अब षट् के प्रयोग और प्रकाश में आने की कहानी डॉ. हीरालालजी के शब्दों में ---"इस ग्रंथ के प्रकाश में आने का भी एक रोचक इतिहास है। इस ग्रंथ का साहित्यकारों द्वारा प्रचुरता से उपयोग केवल 11 वीं 12 वीं शताब्दी तक गोम्मटसार के कर्ता और उनके टीकाकारों तक ही पाया जाता है। उसके पश्चात के लेखक इन ग्रंथों के नाम मात्र से परिचित होते हैं। इस ग्रंथ की दो संपूर्ण और एक त्रुटित, ये तीन प्रतियां प्राचीन कन्नड लिपि में ताड़पत्र पर लिखी हुई केवल एक स्थान में, अर्थात मैसूर राज्य में मूडबद्री नामक स्थान के सिद्धान्त वसदि नामक मंदिर में ही सुरक्षित बची थीं, और वहां भी इनका उपयोग स्वाध्याय के लिए नहीं, किंतु दर्शनमात्र से पुण्यार्जन के लिए किया जाता था। उन प्रतियों की उत्तरोत्तर जीर्णता को बढती देख कर समाज के कुछ कर्णधारों को चिंता हुई, सन् 1895 के लगभग उनकी कागज पर प्रतिलिपि करा डालने का निश्चय किया गया। प्रतिलेखन कार्य सन् 1932 तक चलता रहा और 26-27 वर्ष में पूर्ण हुआ। किंतु इसी बाच इनकी एक प्रतिलिपि गुप्त रूपसे बाहर निकलकर सहारनपुर पहुंच गई। अतएव इनकी नागरी

लिपि कराने का आयोजन किया गया, जो 1924 तक पूरा हुआ। इस कार्य के संचालन के समय उनकी एक प्रति पुनः गुप्त रूप से बाहर आ गई, और उसीकी प्रतिलिपियां अमरावती, कारंजा, सागर और आरा में प्रतिष्ठित हुईं। इन्हीं गुप्त रूप से प्रगट प्रतियों पर से इसका संपादन कार्य प्रस्तुत लेखक द्वारा सन् 1938 में प्रारंभ हुआ और सन् 1958 में पूर्ण हुआ। हर्ष की बात यह है कि इसके दो भाग प्रकाशित होने के पश्चात् ही मूडबिद्री की सिद्धांत बस्ति के अधिकारियों ने मूल प्रतियों के मिलान की भी सुविधा प्रदान कर दी जिससे इस महान ग्रंथ का सम्पादन-प्रकाशन प्रामाणिक रूप से हो सका।"

अब महावीर के जन्म स्थान के संबंध में कषायपाहुड और षट्खंडागम की सामग्री का तुलनात्मक अध्ययन-- कृपया रेखांकित स्थलों पर विशेष ध्यान दें--

कषायपाहुड--- (तुलना के लिए यहां फिर से उद्दृत सामग्री)

"तं जहा, आषाढ़जोण्हपक्खछट्टीए कुण्डपुर णगराहिव -णाह वंस सिद्धत्थणरिंदस्स -तेरसीए रत्तीए तिसिलादेवीए गब्भमार्गतूण तत्थ अट्ठदिवसाहिय णवमासे अच्छिय चइत्त सुक्कपक्ख तेरसीए रत्तीए उत्तरफल्गुणीणक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो वड्ढमाण जिणिंदो।" इसका अनुवाद भी इस प्रकार दिया गया है--आषाढ़ महीना के शुक्लपक्ष की षष्ठी के दिन कुण्डपुर (कुण्डलपुर) नगर के स्वामी नाथवंशी सिद्धार्थ नरेंद्र की त्रिसलादेवी के गर्भ में आकर और वहां नौ मास आठ दिन रह कर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुए भगवान महावीर गर्भ से बाहर आए " पृ 76-77 । उदृत अंश कषायपाहुड से लिए गए हैं जिसका प्रकाशन 1944 में चौरासी संघ मथुरा से हुआ था "

"उक्त उद्धरण से यह स्पष्ट है कि मूल गाथा में कुंडपुर ही है किंतु आर्यिका चंदनामती ने कुंडलपुर को ही अपने ठोस प्रमाण के रूप में ग्रहण किया है । कुण्डपुर के साथ ही कुण्डलपुर अनुवादक ने कोष्ठक में लिख दिया है । सारे विश्व में यह मान्यता है कि जब मूल (Original text) और अनुवाद (Translation) में भेद हो, तो मूल को ही प्रामाणिक माना जाता है।" कषायपाहुड़ में ही---

"महावीर के जन्म आदि का वर्णन करनेवाली कुछ प्राचीन गाथाएं मिलती हैं जिनका भाव इस प्रकार है---

"सुरमहिदोच्चुदकप्पे भोागं दिव्वाणुभागमणुभूदो
पुप्फूत्तरणामादो विमाणदो जो चुदो संतो।।
बाहत्तरिवासाणि य थोवविहीणाणि लद्धपरमाऊ।

आसाढजोण्हपक्खो छट्ठीए जोणिमुवयादो ।।
कुण्डपुरपुरवरिस्सरसिद्धत्थक्खत्तियस्स णाहकुले ।
तिसिलाए देवीए देवीसदसेवमाणाए ।।
अच्छिता णवमासे अट्ठ य दिवसे चइत्तसियपक्खे ।
तेरसिए रत्तीए जादुत्तरफग्गुणीए दु ।।"

कैलाशचंद्रजी द्वारा उपर्युक्त गाथाओं का दिया गया भाव "जो देवों के द्वारा पूजा जाता था , जिसने अच्युत कल्प नामक स्वर्ग मे दिव्य भोगों को भोगा , ऐसे **महावीर जिनेंद्र** का जीव कुछ कम बहत्तर वर्ष की आयु पाकर, पुष्पोत्तर नामक विमान से च्युत हो कर, आषाढ़ शुक्ला षष्ठी के दिन , **कुण्डपुर** नगर के स्वामी सिद्धार्थ क्षत्रिय के घर, नाथवंश में, सैकड़ों देवियों से सेवित त्रिशला देवी के गर्भ में आया और वहां नौ माह आठ दिन रहकर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी की रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुए **महावीर का जन्म** हुआ।"

षट्खंडागम--[14]

के चतुर्थ वेदना खंड में भी कषायपाहुड जैसी गाथा या श्लोक आए हैं। देखिए-
तुलना करिए----

" तं जहा आसाढजोण्णपक्खछट्ठीए कुंडलपुरणगराहिव णाहवंस -सिद्धत्थ णरिंदस्स तिसिलादेवीए गब्भमागंतूण तत्थ अट्ठदिवसाहिय णवमासे अच्छिय चइत्त सुक्खपक्खतेरसिए उत्तराफग्गुणीणक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो वड्ढमाण जिणिंदो ।"

अर्थ (जो ग्रंथ में दिया है) आषाढ शुक्ल पक्ष षष्ठी के दिन कुण्डलपुर नगर के अधिपति नाथवंशी सिद्धार्थ नरेंद्र की त्रिशलादेवी के गर्भ में और वहां आठ दिन अधिक नौ मास रहकर चैत्र शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी के दिन उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में गर्भ से बाहर आए।" पृ 121(पुस्तक में दिया गया अनुवाद)

अगले पृष्ट 122 पर एत्थेव उज्जंतीओ गाहाओ (उपयोगी गाथाएं) दी गई हैं--

"सुरमहिदोच्चुदकप्पे भोगं दिव्वाणुभागमणु भूदो।
पुप्फुत्तरणामादो विमाणदो चुदो संतो।।26।।
बाहत्तरिवासाणि य थोव विहिणाणि लद्धपरमाऊ।
आसाढ़जोण्णपक्खे छट्टीए जोणिमुवयादो।।27।।
कुण्डपुरपुरवरिस्सरसिद्धत्थक्खत्तियस्स णाहकुले।
तिसिलाए देवीए देवीसदसेवमाणाए।।28।।
अच्छित्ता णवमासे अट्ठ य दिवसे चइत्तसिय य पक्खे।

तेरसिए रत्तीए जादुत्तर फग्गुणी ए।। 29।।"

"यहां उपयुक्त गाथाएं-

" वर्धमान भगवान अच्युत कल्प में देवों से पूजित हो दिव्य प्रभाव से संयुक्त भोगों का अनुभव कर पुनः पुष्पोत्तर नामक विमान से च्युत हो कर कुछ कम बहत्तर वर्ष प्रमाण उत्कृष्ट आयु को प्राप्त कर आषाढ़ शुक्ल पक्ष की षष्ठी के दिन योनि को प्राप्त हुए अर्थात् गर्भ में आए।26-27। तत्पश्चात् कुण्डलपुर रूप उत्तम पुर के ईश्वर सिद्धार्थ क्षत्रिय के नाथकुल में सैकडों देवियों से सेव्यमान त्रिशलादेवी के (गर्भ में) नौ मास और आठ दिन रहकर चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में त्रयोदशी की रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।"

अब तुलना परिणाम पर एक दृष्टि और निष्कर्ष---

(1) कषायपाहुड और षट्खंडागम दोनों ही ग्रंथों की धवला टीका के रचयिता आचार्य वीरसेन हैं। दोनों ही ग्रंथों का गद्य और पद्य भाग एक-सा है।

(2) **कषायपाहुड** के प्राकृत-संस्कृत मूल भाग में **सर्वत्र कुण्डपुर** आया है। केवल हिंदी अनुवाद में अनुवादक ने कुण्डपुर के बाद कोष्ठक में कुण्डलपुर लिख दिया है जो कि अनुवादक की तत्कालीन (1944 जब कि कुण्डपुर की खोज की विस्तृत जानकारी जैन समाज को नहीं हो पाई थी) जानकारी का परिणाम है। इसलिए मूल लेख को ताक में रखकर अनुवादक के कथन को प्रामाणिक मानना जान-बूझकर मक्खी निगलना है। ऐसा वे ही कर सकते हैं जो दुराग्रह से ग्रसित हों।

निष्कर्ष निम्न कुछ तथ्यों पर विचार के बाद--

प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता कनिंघम ने वैशाली के अस्तित्व संबंधी कुछ विवरण दिया था किंतु उसमें वीर प्रभु के जन्मस्थान का जिक्र नहीं था। कोई जैन उन्हें महावीर जन्मस्थान संबंधी जानकारी देनेवाला वैशाली में शायद बचा ही नहीं था। वैशाली सूत्र को आगे पल्लवित किया बिहार के तत्कालीन शिक्षा सचिव जगदीशचंद्र माथुर.I.C.S., राहुल सांकृत्यायन, योगेंद्र मिश्रजी , और जगन्नाथप्रसाद साहू ने। इन सबने मिलकर 1945 में वैशाली संघ की स्थापना की, तीर्थंकर महावीर स्कूल की स्थापना करवाई। सन्1948 में महावीर के जन्मस्थान पर महावीर जयंती मनाई गई। ऐसी परिस्थिति में, अनुवादक ने न तो **आचार्य के मूल लेख को बदला, (उसमें कुण्डपुर ही रहने दिया)** और न ही अनुवाद से **कुण्डपुर का लोप ही किया।** खेद है कि आचार्य के लेख को ही नकार कर या आचार्य के कथन को ही असत्य कथन खुले रूप में न बताकर कुण्डलपुर का ढोल पीटा गया है।

क्या यह संभव या विश्सनीय है कि प्रतिभासंपन्न आचार्य वीरसेन स्वामी सबसे प्राचीन कषायपाहुड में महावीर जन्म संबंधी गाथाओं में तो कुण्डपुर लिखें और षट्खंडागम में वे ही गाथाएं लिखने पर कुण्डलपुर लिख दें? क्या उन्हें परस्पर विरोधी कथन का ज्ञान नहीं था? **मुनिगण और दुराग्रहरहित विद्वान गंभीरतापूर्वक विचार करें।** मिलावट हुई है।

(3) **षट्खंडागम** में वीरसेनाचार्य के कथन के साथ छेड़छाड़ की गई है। वह भी जानबूझ कर की गई प्रतीत नहीं होती है। वह केवल कुण्डपुर से ही संबंधित है। अब यह पता करने का प्रयत्न करते हैं कि कुण्डपुर को कुण्डलपुर किसने कर दिया।

(A) सबसे पहली बात तो यह है कि इस ग्रंथ की कानडी लिपि में ताडपत्र पर लिखित प्रति मूडबिदी में पत्थर की पेटी में बंद थी। वह गुप्त रूप से उत्तर भारत पहंची । उसका नागरी लिपि में लिप्यंतरण (TRANSLITERATION) करवाया गया। इस चरण में हिंदी में लिप्यंतरण करनेवाले ने ही संभवत:अपनी तत्कालीन जानकारी (1949 प्रकाशन वर्ष) के अनुसार कुण्डपुर के स्थान पर कुण्डलपुर कर दिया।

(B) उक्त ग्रंथ के संपादन-अनुवाद में संपादक डॉ. हीरालालजी के अतिरिक्त सह सपादक थे - पं .फूलचंदजी तथा पं. बालचंदजी। इनके अतिरिक्त संशाधन सहायक थे पं. देवकीनंदनजी तथा डॉ. नेमिनाथ तनय आदिनाथ। ये पांच नाम षट् के वेदना नामक चतुर्थ खंड में दिए गए हैं जिसका प्रकाशन अमरावती से 1949 में हुआ था। उस समय में उपलब्ध जानकारी के कारण यदि कुण्डपुर में कुण्ड और पुर के बीच में कोई 'ल' घुसा दे, तो अच्छा संपादक भी चूक सकता है। यही **कुण्ड+ल+पुर** की महिमा है। इंग्लेड में एक बार एक अखबार में Crown to inaugurate PARLIAMENT के स्थान पर Crow...... छप गया था !!! एक हिंदी दैनिक में सेवादल के स्थान पर दालसेव छप गया था। अस्तु, इन पांच विद्वानों में से किसी ने आचार्य के मूल लेख को प्रक्षिप्त या interpolate कर दिया। यह शब्द critical editing में प्रयुक्त होता है। इस प्रक्रिया में समानांतर या मिलते-जुलते कथन की तुलना कर शुद्ध पाठ तैयार किया जाता है। ***वास्तव में कषायपाहुड़ के लेख से तुलना करने पर षट् में कुण्डपुर ही अभिप्रेत है।***

पं. बालचंदजी प्राकृत के गहरे विद्वान् माने जाते हैं। उनके द्वारा संकलित तीन भागों में 'जैन लक्षणावली'एक गौरव ग्रंथ है । उन्होंने **षट्खंडागम : परिशीलन** नामक एक ग्रंथ बडे आकार में 915 पृष्ठों में लिखा है। उसमें वेदना खंड का विवेचन तो है किंतु महावीर के जन्म और जन्मस्थान के विषय में उन्होंने कुछ भी नहीं लिखा। प्रस्तुत लेखक ने खूब ढूंढा पर सफलता नहीं मिली। शायद उन्हीं से ..... यह ग्रंथ 1987 में भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हुआ था।

(4) कैसा संयोग है कि कुण्डपुर और षट् की कहानी एक जैसी है। तेरहवीं सदी में तुरुष्कों के आक्रमण के कारण जैनी कुण्डपुर से भाग लिए, वैशाली जैनरहित हो गई।

ग्यारहवीं शती में आचार्य नेमिचंद्र ने **गोम्मटसार** नामक ग्रंथ लिखा। उसके दो भाग हैं- जीवकाण्ड और कर्मकाण्ड। ये दोनों भाग **षट्खंडागम का सार** माने जाते हैं। उनके कारण षट् का पठन-पाठन बंद हो गया और उसका उद्धार 1938 में प्रारंभ हुआ। **वैशाली को भी 13 वीं सदी में जैनों ने भुला दिया** और उसकी सघन खोज 1945 के आसपास हुई।

आर्यिका चंदनामतीजी का मत--उक्त पुस्तिका के पृष्ठ 18-19 पर "बिहार प्रान्त के नालंदा जिले में स्थित कुण्डलपुर " कह दिया है जो कि प्रमाण के आधार पर सिद्ध नहीं किया जा सकता है । पृ 33 पर भी कुण्डलपुर कर दिया है।

⑧ उत्तरपुराण के रचयिता गुणभद्राचार्य ने सन 898 में संस्कत में यह पुराण पूर्ण किया था--इस पुराण के सर्ग 74 और 75 में महावीर के माता-पिता, उनके महल, माता की बहिनों के नाम आदि की चर्चा आई है। सर्ग 74 में उल्लेख है--

भगवान महावीर का जीव जब पुष्पोत्तर विमान में श्रेष्ठ इन्द्र था,तब---

तस्मिनषण्मासशेषायुष्यानाकादागमिष्यति।
भारतेऽस्मिन्विदेहाख्ये विषये भवनांगणे ।।251।।
राज्ञः **कुण्डपुरेशस्य** वसुधारापतत्पृथुः ।
सप्तकोटिर्मणिः सार्धा सिद्धार्थस्य दिनम्प्रति ।।252।।
आषाढस्य सिते पक्षे षष्ठ्यां शशिनि चोत्तरा।
षाढे सप्ततलप्रासादस्याभ्यन्तरवर्तिनि।। 253।।
नन्द्यावर्तगृहे रत्नदीपिकाभिः प्रकाशिते।
रत्नपर्यंके हंसतूलिकादिविभूषिते।।254।।

अर्थ--जब उसकी आयु छह मास की बाकी रह गई और वह स्वर्ग से आने को उद्यत हुआ, तब इस भरत क्षेत्र के **विदेह** देश संबंधी **कुण्डपुर** नगर के राजा सिद्धार्थ के भवन के आंगन में प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ रत्नों की बडी मोटी धारा बरसने लगी ।251-252। आसाढ़ शुक्ल षष्ठी के दिन जब कि चंद्रमा उत्तराषाढ़ नक्षत्र में था, तब राजा सिद्धार्थ की प्रसन्नबुद्धिवाली रानी प्रियकारिणी सात खंडवाले राजमहल के भीतर रत्नमय दीपकों से प्रकाशित **नन्द्यावर्त** नामक राजभवन में हंस-तूलिका आदि से सुशोभित रत्नों के पलंग पर सो रही थी। 253-254।

और तब रानी ने पति से स्वप्नों का फल जाना और देवों ने आकर सिद्धार्थ और रानी प्रियकारिणी का *गर्भकल्याणक अभिषेक* किया और वे अपने स्थान को चले गए।

नवमे मासि सम्पूर्णे चैत्रे मासि त्रयोदशी-।

दिने शुक्ले शुभे योगे सत्यर्थमणि नामानि ।।262।।
अलंकारः कुलस्याभूच्छीलानामालयो महान्।
आकरो गुणरत्नानामाश्रयो विश्रुतश्रियः ।।263।।
भानुमान् बन्धुपद्मानां भुवनत्रयनायकः
दायको मुक्तिसौख्यस्य त्रायकः सर्वदेहिनाम्।।264।।
भर्मद्युतिर्भवध्वंसी मर्मभित्कर्मविद्विषाम्।
धर्मतीर्थस्य धौरेयो निर्मलः शर्मवारिधिः।।265।।
प्राच्यां दिशीव बालार्को यामिन्यामिव चन्द्रमाः।
पद्मायामिव गंगौघो धात्र्यामिव धनोत्करः ।।266।1
वाग्वध्यामिव वाग्राशिर्लक्ष्म्यामिव सुखोदयः।
तस्यां सुतो ऽच्युताधीशो लोकालोकैक भास्करः।।267।।
मानुष्याणां सुराणाञ्च तिरश्चांच चकार सा।
तत्प्रसूत्यापृथुः प्रीतिं तत्सत्यं प्रियकारिणी।।268।।

अर्थ--तदनंतर नौवां माह पूर्ण होने पर चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के दिन अर्यमा नाम के शुभ योग में, जिस प्रकार पूर्व दिशा में सूर्य उत्पन्न होता है, रात्रि में चंद्रमा उत्पन्न होता है, पद्म नामक ह्रद में गंगा का प्रवाह उत्पन्न होता है, पृथ्वी में धन का समूह उत्पन्न होता है, उसी प्रकार उस रानी में वह अच्युतेंद्र नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। वह पुत्र अपने कुल का आभूषण था, शील का बड़ा भारी घर था, गुणरूपी रत्नों की खान था, प्रसिद्ध लक्ष्मी का आधार था, भाईरूपी कमलों को विकसित करने के लिए सूर्य था, तीनों लोकों का नायक था, मोक्ष सुख देनेवाला था, समस्त प्राणियों की रक्षा करनेवाला था, सूर्य के समान कान्तिवाला था, संसार को नष्ट करनेवाला था, कर्मरूपी शत्रु के मर्म को भेदन करनेवाला था, धर्मरूपी तीर्थ का भार धारण करनेवाला था, निर्मल था, सुख का सागर था, और लोक और अलोक को प्रकाशित करने के लिए सूर्य के समान था। 262-267। रानी प्रियकारिणी ने उस बालक को जन्म देकर मनुष्यों, देवों और तिर्यंचों को बहुत भारी प्रेम उत्पन्न किया था इसलिए उसका प्रियकारिणी नाम सार्थक हुआ था। 268।

पुत्र के जन्म के बाद इन्द्र ने अभिषेक आदि संपन्न किए और--

अलं तदिति तं भक्त्या विभूष्योद्घविभूषणैः।
वीरः श्रीवर्धमानश्चेत्यस्याख्याद्वितयं व्यधात् ।।276।।

अर्थ--अधिक कहने से क्या? इन्द ने उन्हें उत्तमोत्तम आभूषणों से विभूषित कर उनके वीर और श्रीवर्धमान इस प्रकार दो नाम रखे।

आर्यिका ज्ञानमतीजी ने भी अपनी चौबीस तीर्थंकर नामक पुस्तक में महावीर का जन्म कुण्डपुर में और उनका शेष जीवन इसी पुराण के आधार पर लिखा है ।

सर्ग 75 में श्रेणिक के प्रश्न पर गौतम गणधर महावीर स्वामी के संघ में आर्यिकाओं का नेतृत्व करनेवाली गणिनी आर्यिका चंदना की जन्मकथा इस प्रकार कहने लगे कि सिंधु नामक देश की **वैशाली नगरी में** जिनभक्त राजा चेटक हुआ। उसके दस पुत्र और दस पुत्रियां थीं। पुत्रियों मे सबसे बड़ी प्रियकारिणी थी और सबसे छोटी चंदना थी और-

सिन्ध्वाख्यविषये **भूभृद्वैशाली नगरे**ऽभवत्।
चेटकाख्यो ऽतिविख्यातो विनीतः परमार्हतः।।75-2।।
............**विदेहविषये कुण्डसंज्ञायां पुरि** भूपतिः । 75-7 ।।
नाथो नाथकुलस्यैकः सिद्धार्थस्त्रिसिद्धिभाक्।
तस्य पुण्यानुभावेन प्रियासीत्प्रियकारिणी।। 75-8।।

अर्थ-- (श्लोक 7 ओर आठ) विदेह देश के **कुण्ड नामक** पुर में नाथ वंश के शिरोमणि एवं तीनों सिद्धियों के धारक राजा सिद्धार्थ राज्य करते थे। पुण्य के प्रभाव से प्रियकारिणी उन्हीं की स्त्री हुई थी।

आर्यिका चंदनामती का मत--इन आर्यिका ने उनके द्वारा रचित पुस्तिका के पृ.33 पर **कुण्डपुरेश का अनुवाद कुण्डपुर** के राजा न कर "कुण्डलपुर के राजा" कर दिया है। ऐसा करना आचार्य गुणभद्र के कथन को अन्यथा करना है जिसकी आशा एक प्रज्ञाश्रमणी से कोई भी नहीं करेगा। यदि वे पुराण में दिया गया अनुवाद ही पढ़ लेतीं तो भी वे ऐसा अनुवाद नहीं करतीं।

'सिंधु आख्य विषय' का भी गलत अर्थ लगाया जाता है। सिंधु के तीन अर्थ हैं-1 सागर 2 नदी (उदाहरण के लिए कालीसिंध नदी जिसके किनारे पर लेखक के नाना का घर था) और 3 सिंध नामक प्रांत या प्रदेश।

आचार्य गुणभद्र कवि होने के कारण विदेह शब्द दो बार नहीं लिखना चाहते होंगे, इसलिए उन्होंने विदेह के दूसरे नाम का यहां प्रयोग किया है। उस प्रदेश में 15 नदियां बहती हैं इसलिए उस प्रदेश के लिए सिंधु देश, उदक देश जैसे नाम मिलते हैं। गुणभद्राचार्य के समय में (9वीं सदी) विदेह क्षेत्र का नाम 'तीरभुक्ति' प्रचलित था। तीर यानी नदी का किनारा, भुक्ति का अर्थ संस्कृत में सीमा limit भी है। वह प्रदेश जिसकी सीमा नदियों से निर्धारित हों । विदेह क्षेत्र की पूर्वी सीमा गंडक नदी है और पश्चिमी सीमा कौशिकी है। कालांतर में तीरभुकित का नाम तिरहुत हो गया जो आजकल भी सरकारी रिकार्ड में भी लक्षित होता है। अतः यहां सिंधु देश से वैशाली प्रदेश ही अभिप्रेत है।

⑨ वीरजिणिंदचरिउ के रचयिता पुष्पदंत (ईस्वी 965) ने इस अपभंश रचना में महावीर का जन्म स्थान इस प्रकार बताया है--पहले इस लघु ग्रंथ का परिचय। भगवान महावीर के 2500 वें निर्वाण महोत्सव के अवसर पर यह निश्चय हुआ था कि डॉ. हीरालालजी से अपभ्रंश सामग्री के आधार पर महावीर का जीवनवृत्त लिखवाया जाए। तदनुसार हीरालालजी ने स्वास्थ्य खराब होते हुए भी उक्त पुस्तक लिखी। उसका आधार था "महाकइ पुप्फयंत विरयउ तिसष्टि महापुरिस महापुराणु" अर्थात् महाकवि पुष्पदंत विरचित त्रिषष्टि (63) महापुरुष महापुराण तथा श्रीचंद्र का कथाकोसु। इस पुराण में चौबीस तीर्थंकरों के जीवन वर्णित हैं। महावीर का जीवन निम्न प्रकार दिया गया है--सौधर्म स्वर्ग के इन्द्र ने जगत कल्याण की भावना से प्रेरित हो कर कुबेर से कहा--

इह जंबूदीवि भरहंतरालि। रमणीय विसइ सोहा-विसालि।।
कुण्डउरि राउ सिद्धत्थु सहिउ। जो सिरिहरु मग्गण-वेस रहिउ।।
घत्ता-पियकारिणि देवि तुंग-कुंभि-कुंभत्थणि।
तहु रायहु इठ्ठ णारीयण-चूडामणि ।। 1-6-15।।

अर्थ--इस जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र में विशाल शोभाधारी **विदेह प्रदेश में कुण्डपुर** के राजा सिद्धार्थ राज्य करते हैं। वे आत्महितैषी और श्रीधर होते हुए भी विष्णु के समान वामनावतार संबंधी याचक वेष से रहित हैं।। ऐसे उन सिद्धार्थ राजा की रानी प्रियकारिणी देवी थीं जो विशाल हाथियों के कुम्भस्थलों के समान पीनस्तनी होती हुई समस्त नारी समाज की चूडामणि थीं।।6।।

एयहँ दोहिं मि सुर-सिरि-विलासु।
करि धणय कणय -भासुरु णिवासु।।
ता कयउ **कुंडपुरु** तेण चारु। 1-7-5।।

अर्थ--अतएव हे कुबेर, इन दोनों के निवास-भवन को स्वर्णमयी, कान्तिमान व देवों की लक्ष्मी के विलास योग्य बना दो। इन्द्र की आज्ञानुसार कुबेर ने **कुण्डपुर** को ऐसा ही सुंदर बना दिया। 1-7-5

आसाढ-मासि ससियर-पयासि ।
पक्खंतरालि हय -तिमिर -जालि।
दिस-णिम्मलम्मि छट्ठि -दिणम्मि ।
संसार-सेउ थिउ गब्भि देउ।

संपण्ण-हिट्ठि कय कणय-विट्ठि।
जक्खेण ताम णव-मास जाम।
मासम्मि पत्ति चित्ता -णिउत्ति।
सिय -तेरसीइ जणिओ सईइ।
जिणु भुवन-णाहु भ्म्माह-देहु।। 1-9-15।।

अर्थ-- आषाढ़ मास के चंद्र से प्रकाशमान व अन्धकार समूह को दूर करनेवाले शुक्लपक्ष में छठी तिथि के दिन जब दिशाएं निर्मल थीं, तब संसार के सेतुभूत भगवान **महावीर** माता के गर्भ में आकर स्थित हुए। तब से नव मास तक धरणेंद्र यक्ष आनंदमयी स्वर्ण की वृष्टि करता रहा। जब चित्रा नक्षत्रयुक्त चैत्रमास का आगमन हुआ, तब शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी के दिन उस सती ने स्वर्ण की आभा से युक्त शरीरवान् भुवननाथ **जिनेंद्र को जन्म दिया।**

पुष्पदंत मुनि कहां निवास करें--डा.हीरालालजी ने 'भारतीय संस्कृति में जैन योगदान' में लिखा है--"संवत् 1029 के लगभग जब धारा के परमारवंशी राजा हर्षदेव के द्वारा मान्यखेट लूटी गई और जलाई गई, तब महाकवि पुष्पदंत के मुख से हठात् निकल पडा कि "जो मान्यखेट नगर दीनों और अनाथों का धन था, सदैव बहुजनपूर्ण और पुष्पित उद्यान वनों से ऐसा सुंदर था कि वह इन्द्रपुरी की शोभा को भी फीका कर देता था, वह जब धारानाथ की कोपाग्नि से भस्म हो गया, तब अब पुष्पदंत कवि कहां निवास करें? "

प्रस्तुत लेखक आर्यिकाओं को यही स्मरण कराना चाहता है कि तहतगिरि और मान्यखेट की भांति वैशाली और कुण्डपुर भी इसी प्रकार के अत्याचार के शिकार हुए थे।

आर्यिका-- मत-- आर्यिका चंदनामतिजी ने इस उद्धरण में भी कुण्डउरि तथा **कुण्डपुरु का अनुवाद कुण्डलपुर कर दिया है जो कि मूल में नहीं है।** (पृ.33) ऐसा करना ज्ञानातिचार में गिना जाता है। इस अतिचार की परिभाषा ऊपर दी गई है।

⑩ दसवीं सदी के कवि दामनन्दि ने पुराणसारसंग्रह भाग 2 में महावीर के **जन्मस्थान** की चर्चा चौबीस तीर्थंकरों के प्रसंग में की है। इसमें तीर्थंकरों संबंधी विवरण संक्षेप में कथित है। इसके चतुर्थ सर्ग में महावीर के पूर्व भवों का उल्लेख करने के बाद श्री ***वर्धमान चरित*** शीर्षक के अंतर्गत निम्न श्लोक आया है--

अथाऽस्मिन् भारते वर्षे विदेहेषु महर्द्धिषु।
आसीत्कुण्डपुरं नाम्ना सुरपुरोत्तमम्।। 4-1।

अर्थ--अथानंतर इसी भरतक्षेत्र में **विदेह** नाम समृद्धिशाली देश है। वहां देवों के नगरों से भी उत्तम **कुण्डपुर** नाम का नगर था।

इस पुराणसारसंग्रह में हिंदी पृष्ठों की संख्या अलग दी है और संस्कृत पृष्ठों की संख्या अलग दी है इसलिए यहां मूल श्लोक ही दे दिया है। (इसका प्रकाशन सन् 1955 में भारतीय ज्ञानपीठ, काशी ने किया था)

⑪ असंग नामक संस्कृत कवि ने वर्धमान चरित की रचना ईस्वी 988 में पूर्ण की थी--कवि का कथन है कि उसने श्रीनाथ के राज्य काल में चोल राज्य (तमिलनाडु का प्रसिद्ध राज्य) की विभिन्न नगरियों मे आठ ग्रंथों की रचना की थी। उनमें प्रमुख हैं-वर्धमान चरित और शांतिनाथ पुराण। वर्धमान चरित की कथा उत्तरपुराण से ली गई है और उसमें काव्योचित परिवर्तन भी किया है। कथा 18 सर्गों में है। श्लोक हैं--

श्रीमानथेह भरते स्वमस्ति धात्र्या पुंजीकृतो निज इवाखिलकान्तिसारः।
नाम्ना **विदेह** इति दिग्वलये समस्ते ख्यातः परः **जनपदः** पदमुन्नतानाम्।। 17-1
तत्रास्त्यधो निखिलवस्त्ववगाहयुक्तं भास्वत्कलाधरबुधैः संवृषं सतारम्।
अध्यासितं वियदिव स्वसमानशोभं **ख्यातं पुरं जगति कुण्डपुराभिधानम्**।।17-7
उन्मीलितावधिदृशाः सहसा विदित्वा तज्जन्म भक्तिभरतः प्रणतोत्तमांगाः।
घण्टानिनाद समवेतनिकायमुख्या दिष्ट्या ययुस्तदिति **कुण्डपुरं** सुरेन्द्राः।।

अर्थ--अथानंतर इसी भरत क्षेत्र में एक ऐसा लक्ष्मीसंपन्न देश है जो पृथ्वी की स्वयं एकत्र की गई अपनी समस्त कान्तियों का मानों सार ही है और जो समस्त दिशाओं में विदेह नाम से प्रसिद्ध है तथा उत्तम मनुष्यों के रहने का उत्कृष्ट स्थान है।17-1। उस विदेह में कुण्डपुर नामक जगत्प्रसिद्ध नगर था जो स्वसमृद्ध शोभा से संपन्न होता हुआ आकाश के समान सुशोभित था। जिस प्रकार आकाश में समस्त वस्तुओं का अवगाह है, (जैनदर्शन की मान्यता) उसी प्रकार वह भी समस्त वस्तुओं का अवगाह था अर्थात् वहां समस्त वस्तुएं पाई जाती थीं। 17-7। खुले हुए अवधिज्ञान के नेत्र द्वारा शीघ्र ही जिन बालक का जन्म जानकर भक्ति के भार से जिनके मस्तक झुक गए थे तथा जिनके भवन घण्टों के निनाद से शोभायमान हो रहे थे, ऐसे इन्द्र उस समय सौभाग्य से **कुण्डपुर** आए।

आर्यिका का मत--विदुषी आर्यिका ज्ञानमतीजी ने यहां कुण्डपुर को कुण्डलपुर कर दिया है। देखिए उपर्युक्त पुस्तिका के पृ. 13 और 14। अत्यंत खेद की बात है।

①② सदी 12 वीं में विबुह सिरिहर विरइ= विबुध श्रीधर रचित वड्डमाण चरिउ अर्थात् वर्धमान चरित अपभ्रंश में लिखा गया था ---वैसे तीन श्रीधर हुए हैं किंतु पार्श्वनाथ और वर्धमान चरित के रचनाकार से ही यहां हमारा प्रयोजन है। श्लोक हैं--

णिवसइ **विदेहु** णामेण देसु खयरामरेहिं सुहयर -पएसु।

तहिं णिवसइ **कुण्डपुराहहाणु** पुरुधय-चय-झंपिवे -तिव्व भाणु ।। (यहां व्याकरण संबंधी कथन छोड दिया है।)

अर्थ-- देवों और विद्याधरों से सुशोभित **विदेह** नामक एक सुप्रसिद्ध देश है जहां धर्मिक लोग रहते हैं। उस देश में **कुण्डपुर** नाम का एक नगर है जिसकी ध्वजाओं ने तीव्र सूर्य को भी ढंक लिया था।

तत्थन्ति सिद्धत्थु णरणाहु सिद्धत्थु।

सुरराय-संकासु जिनधम्म संकासु।।9-3-174।।

अर्थ--उस कुण्डपुर में समस्त अर्थों को सिद्ध कर लेनेवाला सिद्धार्थ नामक राजा राज्य करता था जो जिनधर्म से दैदीप्यमान था।

घत्ता--सा परिवरिय बहुगुण भरिय पियकारिणि णित्तारिहिं ।

रेहइ गयणे ससि-रवि सयणे चंदकला व तारे हि।।9-5-175।।

<u>अर्थ--</u>सिद्धार्थ के मन को प्रिय लगनेवाली प्रियकारिणी नाम की प्रिया थी जो समस्त जनों के लिए सुखकारी, महिला जगत में सुभग-सुदर तथा पृथ्वी के लिए मण्डन स्वरूपा थी।

<u>सुउ जणिउ</u> तौए उतत्थिएसु महुमासे सेय तइयहे गहेसु ।

उत्तर-फग्गुणिए सतेह चंदे वियसाविय -कइरव -कलिए वं दे।।9-1-179।।

अर्थ--उस माता प्रियकारिणी ने ग्रहों के उच्चस्थल में होते ही मधुमास चैत्र की शुक्ल त्रयोदशी के दिन कैरव-कलियों को विकसित करनेवाला चंद्रमा जब उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में स्थित था, तभी उस **(जिनेंद्र) को जन्म दिया** जिस प्रकार गगन तल के साथ ही समस्त दिशाऐं प्रसन्न-निर्मल हो गयीं, उसी प्रकार प्राणियों के ह्लदय भी आह्लादित हो उठे।।

(अनुवाद- डॉ. राजाराम द्वारा दिए अनुसार दिया गया है।)

⓵⓷ गृहस्थ प्रकाण्ड विद्वान् आशाधर सूरि ने त्रिषष्टिस्मृतिशास्त्र की रचना विक्रम संवत1292 तदनुसार ईस्वी 1235 में की थी--उक्त ग्रंथ में 63 शलाकापुरुषों का जीवन संक्षेप में जिनसेनाचार्य के पुराण के आधार पर अपने स्वाध्याय के लिए लिखा गया था। उनके लिखे 20 ग्रंथ बताए जाते हैं जिनमें से सात की खोज बाकी है। उनके ग्रंथो में सबसे अधिक ख्याति सागार धर्मामृत और अनगार धर्मामृत के कारण है।

पं. आशाधर मूल रूप से मेवाड़ के मांडलगढ़ स्थान के निवासी थे। किंतु **1262** में शहाबुद्दीन गौरी ने जब दिल्ली और अजमेर पर अधिकार कर लिया, तब **आशाधरजी ने** उसके **आक्रमण परिणामों से दुखी होकर अपने धर्म और चरित्र की रक्षा के लिए अपनी जन्मभूमि छोड़ दी** और वे अपने पूरे परिवार सहित मालवा देश की धारा नगरी में चले गए। (आजकल धारा नगरी केवल धार कहलाती है और पर्यटन स्थल है) आशाधरजी के समय में यह नगरी विद्या का केंद्र थी।

आर्यिकाओं को ध्यान पुनः इस तथ्य की ओर आकर्षित किया जाता है कि इसी प्रकार की परिस्थिति वैशाली के जैनों के सामने भी आई होगी और वे वैशाली से भाग निकले और कालांतर में वैशाली जैनों से रहित हो गई। अब उद्धरण--

...चुत्वा विदेहनाथस्य सिद्धार्थस्यांगजोऽजनि।
सोऽत्र **कुण्डपुरे** शक्रः कृत्वाभिषवणादिकम्।।

अर्थ--(पुष्पोत्तर विमान से) च्युत होकर विदेह देश के स्वामी सिद्धार्थ और उनकी रानी के गर्भ में आकर (महावीर) **कुण्डपुर में जन्मे** जहो इन्द्र ने अभिषेक आदि संपन्न किये

⓵⓸ सकलकीर्ति 15 वीं शती के आचार्य और भट्टारक ने वीरवर्धमान चरित में भगवान महावीर के जन्मस्थान का सुंदर वर्णन किया है--सकलकीर्तिअणहल पट्टण के निवासी थे। प्रारंभ से ही उदासीन वृत्ति के थे। वे 26 वर्ष की आयु में दीक्षित और 34 वर्ष की आयु मे आचार्य हुए थे। जीवन के अंतिम भाग में वे भट्टारक बने और गलियाकोट में भट्टारक गद्दी की स्थापना की। उन्होंने संस्कृत में छोटी बडी 29 और राजस्थानी में 8 पुस्तकें लिखीं। वे प्रतिष्ठित और प्रभावक मुनि तथा प्रतिष्ठाकारक माने जाते हैं। उन्होंने बांगड और गुजरात में गांव-गांव घूम कर जैनधर्म का पुनर्जागरण किया था।

वीरवर्धमानचरित में 19 अधिकार या सर्ग हैं जो संस्कृत में लिखे गए हैं।

सप्तम अधिकार में विदेह एवं कुण्डपुर का वर्णन इस प्रकार आया है--

अथेव भरते क्षेत्रे विदेहाभिध ऊजितः।

देशः सद्धर्मसंघाद्यैर्विदेह व राजते।।2।।
इत्यादि वर्णनोपेत देशस्याभ्यंतरे **पुरम्।**
कुण्डाभिधं विराजते नाभिवद्धार्मिकैर्ममहत्।।10।।
पतिः तस्य महीपालः श्रीमन् सिद्धार्थसंज्ञकः ।
आसीत् काश्यपगोत्रस्थो हरिवंशनभोंद्रऽशुमान्।।22।।
तस्याभवत् महादेवी सन्नाम्ना प्रियकारिणी ।
अनोपम्यैः गुणव्रातैर्जगतां पुण्यकारिणी।।28।।
अथसौधर्म कल्पेशो ज्ञात्वाच्युत सुरेशिनः ।
षण्मासावधिशेषायुः प्राहेति धनदं पति।।42।।
श्रीदात्र भारते क्षेत्रे सिद्धार्थनृपतिमंदिरे।
श्रीवर्धमान तीर्थेश्चरमो ऽवतरिष्यति।।43।।

अर्थ--अथानंतर इसी भारतवर्ष में एक विशाल देश है जो मुनीश्वरों के संघ आदि से विदेह क्षेत्र के समान शोभायमान है।2। इत्यादि वर्णन से संयुक्त उस देश के भीतर नाभि के समान मध्य भाग में **कुण्डपुर** नामक महान नगर विराजमान है।10। उस कुण्डपुर के स्वामी श्रीमान् सिद्धार्थ नामवाले महीपाल थे जो काश्यपगोत्री, हरिवंश गगन के सूर्य थे। 22 । उस सिद्धार्थ नरेश की रानी प्रियकारिणी इस उत्तम नामवाली महादेवी थी जो अपने अनुपम गुण समूह से जगत की पुण्यकारिणी थी। 28। अथानंतर सौधर्म के इन्द्र ने उक्त अच्युतेंद्र की छह मास प्रमाण आयु को जानकर कुबेर के प्रति इस प्रकार कहा-। 42। हे धनद, इस भरत क्षेत्र के सिद्धार्थ मंदिर में **अन्तिम तीर्थंकर वर्धमान स्वामी अवतार लेंगे** अतः तुम जाकर के उनके भवन में रत्नों की वर्षा करो तथा पुण्य प्राप्ति के लिए स्व-पर को सुख करनेवाले शेष आश्चर्यों को भी करो।43।

आर्यिकाओं के मत-- आ.चंदनामतीजी ने उक्त उद्धरण में कुण्डपुर को कुण्डलपुर कर दिया है जो कि अनुचित है। पृ. 34 की दूसरी लाइन में वे कुण्डपुर लिख रही हैं तो 6 ठी लाइन में कुण्डलपुर लिखती हैं।

थोडी़-सी भी संस्कृत जाननेवाला श्लोक 10 यदि ध्यान से पढ़े, तो वह इस श्लोक का अर्थ बड़ी आसानी से वही अर्थ निकालेगा जो कि ऊपर दिया गया है। कवि ने श्लोक की प्रथम पंक्ति के अंत में पुर शब्द दिया है और दूसरी लाइन के ठीक पहले कुण्ड लिखा है । दोनों शब्द मिलकर कुण्डपुर बनता है। काव्य में इस प्रकार के प्रयोग छंद की आवश्यकता के अनुसार करने पड़ते हैं। यदि कवि ऐसा नहीं करते, तो दूसरी लाइन में मात्राओं की संख्या बढ़ जाती और छंद नहीं बनता।

दूसरी बात कुण्डाभिधं की है। संधि-विच्छेद करने पर कुण्ड+अभिधं बनता है। अभिधा का अर्थ नाम का या named भी होता है।

➊➎ सत्रहवीं सदी में हुए मुनि धर्मचंद्र ने गौतमचरित्र की रचना संस्कृत में की है। ग्रंथ का पूरा नाम मंडलाचार्य श्री धर्मचंद्र विरचित श्री गौतमचरित्र है। मंडलाचार्य की उपाधि किसी समय मुनियों को दी जाती थी। चरित्र संस्कृत और हिंदी अनुवाद से समन्वित है। (प्रकाशक हैं-मूलचंद किशनदास कापडिया, सूरत,वीर संवत् 2453 । शायद यह ग्रंथ आजकल नहीं मिलता हो)

उक्त काव्य के चौथे अधिकार में महावीर स्वामी के जीवन संबंधी तथ्य दिए गए है।

अथेह भरते क्षेत्रे **विदेह**विषये शुभे।
भूरिपुरादि संयुक्ते भाति **कुण्डपुर** पुरम्।। 4-1।।
चैत्रे सितत्रयोदश्यां राज्ञी **जिनमसूत** सा।
स्वोच्चगतैग्रह दृष्टि शुभ लग्ने गते सति।।4-24।।

अर्थ--इसी भरत क्षेत्र में एक **विहेह** क्षेत्र है जो कि बहुत ही शुभ है और अनेक नगरों से सुशोभित है। उनमें एक **कुण्डपुर** नाम का नगर है।4-1। चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन जब कि सब ग्रह उच्च स्थान में थे और लग्न शुभ था, उस समय **महारानी त्रिशलादेवी ने भगवान महावीर स्वामी को जन्म दिया।** 4-24।(पुस्तक में दिया गया अनुवाद)

अंतवचन Epilogue

आ.चंदनामतीजी ने पुस्तिका में कुण्डपुर को महावीर की जन्मभूमि के प्रमाण उपस्थित करनेवालों को लक्ष्य कर लिखा है कि उन्हें "प्राचीन दि.ग्रंथों के दस्तावेज प्रस्तुत करना चाहिए" पृ 25

(1) इसी लेख में प्रस्तुत हैं प्राकृत, संस्कृत और अपभ्रश ग्रथों से 15 (पंद्रह) दस्तावेज जिनकी गणना 'प्राचीन' में निष्पक्ष विद्वानों तथा मुनियों से प्रमाणित हो सकती है।

(2) उन्होंने यह भी लिखा है कि "**संपूर्ण दिगम्बर जैन आगम ग्रंथ** इसी तथ्य को स्वीकार करते हैं कि भगवान महावीर ने बिहार प्रांत के कुण्डलपुर में जन्म लेकर...." **आ. चंदनामतिजी कृपया उन संपूर्ण ग्रंथों के नाम, लेखक या कवि या टीकाकार के नाम,**

देशः सद्धर्मसंघाद्यैर्विदेह व राजते।।2।।
इत्यादि वर्णनोपेत देशस्याभ्यंतरे **पुरम्।**
कुण्डाभिधं विराजते नाभिवद्धार्मिकैर्ममहत्।।10।।
पतिः तस्य महीपालः श्रीमन् सिद्धार्थसंज्ञकः ।
आसीत् काश्यपगोत्रस्थो हरिवंशनभोंद्रऽशुमान्।।22।।
तस्याभवत् महादेवी सन्नाम्ना प्रियकारिणी ।
अनोपम्यैः गुणव्रातैर्जगतां पुण्यकारिणी।।28।।
अथसौधर्म कल्पेशो ज्ञात्वाच्युत सुरेशिनः ।
षण्मासावधिशेषायुः प्राहेति धनदं पति।।42।।
श्रीदात्र भारते क्षेत्रे सिद्धार्थनृपतिमंदिरे।
श्रीवर्धमान तीर्थेश्चरमो ऽवतरिष्यति।।43।।

अर्थ--अथानंतर इसी भारतवर्ष में एक विशाल देश है जो मुनीश्वरों के संघ आदि से विदेह क्षेत्र के समान शोभायमान है।2। इत्यादि वर्णन से संयुक्त उस देश के भीतर नाभि के समान मध्य भाग में **कुण्डपुर** नामक महान नगर विराजमान है।10। उस कुण्डपुर के स्वामी श्रीमान् सिद्धार्थ नामवाले महीपाल थे जो काश्यपगोत्री, हरिवंश गगन के सूर्य थे। 22 । उस सिद्धार्थ नरेश की रानी प्रियकारिणी इस उत्तम नामवाली महादेवी थी जो अपने अनुपम गुण समूह से जगत की पुण्यकारिणी थी। 28। अथानंतर सौधर्म के इन्द्र ने उक्त अच्युतेंद्र की छह मास प्रमाण आयु को जानकर कुबेर के प्रति इस प्रकार कहा-। 42। हे धनद, इस भरत क्षेत्र के सिद्धार्थ मंदिर में **अन्तिम तीर्थंकर वर्धमान स्वामी अवतार लेंगे** अतः तुम जाकर के उनके भवन में रत्नों की वर्षा करो तथा पुण्य प्राप्ति के लिए स्व-पर को सुख करनेवाले शेष आश्चर्यों को भी करो।43।

आर्यिकाओं के मत-- आ.चंदनामतीजी ने उक्त उद्धरण में कुण्डपुर को कुण्डलपुर कर दिया है जो कि अनुचित है। पृ. 34 की दूसरी लाइन में वे कुण्डपुर लिख रही हैं तो 6 ठी लाइन में कुण्डलपुर लिखती हैं।

थोडी-सी भी संस्कृत जाननेवाला श्लोक 10 यदि ध्यान से पढ़े, तो वह इस श्लोक का अर्थ बड़ी आसानी से वही अर्थ निकालेगा जो कि ऊपर दिया गया है। कवि ने श्लोक की प्रथम पंक्ति के अंत में पुर शब्द दिया है और दूसरी लाइन के ठीक पहले कुण्ड लिखा है । दोनों शब्द मिलकर कुण्डपुर बनता है। काव्य में इस प्रकार के प्रयोग छंद की आवश्यकता के अनुसार करने पड़ते हैं। यदि कवि ऐसा नहीं करते, तो दूसरी लाइन में मात्राओं की संख्या बढ़ जाती और छंद नहीं बनता।

दूसरी बात कुण्डाभिधं की है। संधि-विच्छेद करने पर कुण्ड+अभिधं बनता है। अभिधा का अर्थ नाम का या named भी होता है।

➊➎ सत्रहवीं सदी में हुए मुनि धर्मचंद्र ने गौतमचरित्र की रचना संस्कृत में की है। ग्रंथ का पूरा नाम मंडलाचार्य श्री धर्मचंद्र विरचित श्री गौतमचरित्र है। मंडलाचार्य की उपाधि किसी समय मुनियों को दी जाती थी। चरित्र संस्कृत और हिंदी अनुवाद से समन्वित है। (प्रकाशक हैं-मूलचंद किशनदास कापडिया, सूरत,वीर संवत् 2453 । शायद यह ग्रंथ आजकल नहीं मिलता हो)

उक्त काव्य के चौथे अधिकार में महावीर स्वामी के जीवन संबंधी तथ्य दिए गए है।

अथेह भरते क्षेत्रे **विदेहविषये** शुभे।
भूरिपुरादि संयुक्ते भाति **कुण्डपुर** पुरम्।। 4-1।।
चैत्रे सितत्रयोदश्यां राज्ञी **जिनमसूत** सा।
स्वोच्चगतैग्रह दृष्टि शुभ लग्ने गते सति।।4-24।।

अर्थ--इसी भरत क्षेत्र में एक **विहेह** क्षेत्र है जो कि बहुत ही शुभ है और अनेक नगरों से सुशोभित है। उनमें एक **कुण्डपुर** नाम का नगर है।4-1। चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन जब कि सब ग्रह उच्च स्थान में थे और लग्न शुभ था, उस समय **महारानी त्रिशलादेवी ने भगवान महावीर स्वामी को जन्म दिया।** 4-24।(पुस्तक में दिया गया अनुवाद)

अंतवचन Epilogue

आ.चंदनामतीजी ने पुस्तिका में कुण्डपुर को महावीर की जन्मभूमि के प्रमाण उपस्थित करनेवालों को लक्ष्य कर लिखा है कि उन्हें "प्राचीन दि.ग्रंथों के दस्तावेज प्रस्तुत करना चाहिए" पृ 25

(1) इसी लेख में प्रस्तुत हैं प्राकृत, संस्कृत और अपभ्रश ग्रथों से 15 (पंद्रह) दस्तावेज जिनकी गणना 'प्राचीन' में निष्पक्ष विद्वानों तथा मुनियों से प्रमाणित हो सकती है।

(2) उन्होंने यह भी लिखा है कि "**संपूर्ण दिगम्बर जैन आगम ग्रंथ** इसी तथ्य को स्वीकार करते हैं कि भगवान महावीर ने बिहार प्रांत के कुण्डलपुर में जन्म लेकर...." **आ. चंदनामतिजी कृपया उन संपूर्ण ग्रंथों के नाम, लेखक या कवि या टीकाकार के नाम,**

समय, मूल उद्धरण और प्रकाशक का नाम जैन समाज के कल्याण के लिए प्रकाशित करें। प्रस्तुत लेखक को भी सूचित करने की महती कृपा करें।

(3) आ.जी ने कुण्डपुर के समर्थकों के लिए **"पापबंध" पृ. 46** की भी भविष्यवाणी कर दी है। प्रस्तुत लेखक तो **महावीर जिनेंद्र से यही** प्रार्थना कर सकता है कि **हे वर्धमान जिनेंद्र, आपकी वास्तविक जन्मभूमि को लुप्त करनेवालों को आप सुबुद्धि दें।** कर्मों का फल तो सभी को मिलता है।

प्रस्तुत लेखक ने अपनी अल्पबुद्धि से इतिहास और प्राचीन ग्रंथों से शुद्ध प्रमाण प्रस्तुत किए। इस समय उसे सर्वार्थसिद्धि (9-9) मे दी गई **प्रज्ञापरीषहजय** की परिभषा याद आ रही है जिसमें निम्न प्रकार लिखा है--

अंग पूर्व प्रकीर्ण विशारदस्य शब्दन्यायाध्यात्म निपुणस्य मम पुरस्तादिरे भास्कर प्रभाभिभूतखद्योतोषोतवन्नितरां नावभासन्त इतिविज्ञाननिरास प्रज्ञापरीषहजयः।

अर्थ--मैं अंग पूर्व और प्रकीर्णक ग्रंथों के रहस्य को जानता हूं तथा न्याय, व्याकरण,और अध्यात्मशास्त्र में भी प्रवीण हूं। **मेरे सामने दूसरे विद्वान् इस प्रकार से निःश्रीक हैं जिस प्रकार कि सूर्य के प्रकाश के आगे जुगनू। इस प्रकार के ज्ञानविषयक अभिमान** को उत्पन्न न होने देना प्रज्ञापरीषहजय है।

प्रस्तुत लेखक का आशय किसी का अपमान करना नहीं है। उसने किसी से धन या आश्रय नहीं लिया है। अपने स्वाभिमान की सदा रक्षा की है। लेख की सामग्री के लिए उसे बहुत परिश्रम करना पड़ा है। विशेष कर दिल्ली में ऐसा कोई जैन पुस्तकालय नहीं है जहां खुली अलमारी से पुस्तक निकाल कर संबंधित सामग्री एकत्रित की जा सके। अजैन सरकारी सूत्रों से भी सामग्री जुटाने में कठिनाई आई है। करीब 4000 पृष्ठों की सामग्री इतिहास और पुराणों से एकत्र की है। महावीर की जिस जन्मभूमि का लगभग 18 वर्ष पूर्व स्वयं भ्रमण किया था, उसके बारे में भ्रामक और आचार्यों तथा महाकवियों के कथन का विपरीतार्थ प्रचार देखकर एक अंगुली से कंप्यूटर चलाया। यदि कहीं हीनाक्षर या अधिकाक्षर की गलती मिले, तो वह लेखक की टाइप करने की गलती है। कंप्यूटर कभी गलती नहीं करता। स्वास्थ्य ठीक नहीं होने के कारण भी ऐसा संभव हो सकता है। सुधीजन क्षमा करें।

आर्यिकाओं से पुनः निवेदन कि वे इतिहास और ग्रंथों के मूल उद्धरणों के आलोक में कुण्डपुर को ही महावीर की जन्मभूमि मानलें ओर वीर प्रभु की मातृभूमि के साथ अन्याय नहीं करें।

यदि भ्रामक प्रचार सफल हुआ, तो वैशाली और कुण्डपुर केवल गौतम बुद्ध से ही संबंधित रह जाएंगे। वैसे भी अनेक स्थानों और मंदिरों से जैनों को वंचित कर दिया गया है। गिरनारजी और खंडगिरि हाथ से निकल जाते दिख रहे हैं। **अपने ही हाथों महावीर की जन्मभूमि निकल जाना जैनधर्म की सबसे बड़ी हानि होगी।**

समाज के धनपतियों, महावीर के श्रद्धालुओं, विद्वानों और **मुनियों को भ्रामक प्रचार का विरोध करना चाहिए। मुनियों से विशेष प्रार्थना है कि वे अपने जीवनकाल में ही अपने तीर्थंकर की जन्मभूमि का लोप नहीं होने दें।** साधरण जनों को उपदेश देने से ही जैनधर्म के प्रति, अपने तीर्थंकर के प्रति उनका कर्तव्य पूरा नहीं हो जाता। यह समय उनकी परीक्षा का है। क्या मुनिगण और श्रावक दो आर्यिकाओं को प्राचीन उल्लेखों के आलोक में भ्रामक प्रचार करने से नहीं रोक सकते ?

जो समाज अपनी विरासत और धर्म को नहीं बचा सकता, उसे कोई बड़ा अजगर निगल जाएगा। वर्तमान भ्रामक प्रचार भी उसमें एक कारण बनेगा।

प्रस्तुत लेखक ने दो मास की जर्मनी की यात्रा की थी। उस समय जर्मन विरासत के कुछ स्थल भी उसे दिखाए गए थे जिनमें से कुछ पांच-सौ या सात सौ वर्ष प्राचीन भी थे। उन पर वहां गर्व है। एक जैन समाज है जो कम से कम 2600 साल पुरानी अपनी विरासत को गंवाने के लिए रजामंद जान पड़ता है। इतना आलस्य है उसमें कि वह भ्रामक प्रचार करनवालों का सामना नहीं कर सकता, सारी विद्वत् संस्थाएं, धर्म रक्षिणी संस्थाएं निष्क्रिय !!!!!!

महावीरजन्मस्थानं जयतु कुण्डपुरम्

1 डॉ वासुदेवशरण अग्रवाल प्रका मध्यप्रदेश शासन परिषद भोपाल 1965, पृ 116 और 123

2 जायसवाल , काशीप्रसाद , हिंदू पोलिटी, 1961 संस्करए, पृ .45

3 आचार्य मुनि विद्यानंद, तीर्थंकर वर्धमान, प्रका. वीर निर्वाण ग्रथ प्रका समिति, इन्दौर पृ 68-69, 1973

4 महावीर स्मृति ग्रंथ, सम्पादक. सुदीप जैन, प्रका. जैन मित्रमंडल , धर्मपुरा, दिल्ली 2002

5 Alter, Dr. State Government in Ancient India Delhi, fn.1,p.25, 1958

6 आचार्य, गुणभद्र, उत्तरपुराण, पृ 464, प्रका भारतीय ज्ञानपीठ , दिल्ली

7 माथुर जगदीशचंद्र , वैशाली दिग्दर्शन

8 प्रेमी नाथूराम, जैन साहित्य और इतिहास प्रका संशोधित साहित्यमाला, ठाकुरद्वार, वंबई 2

9 जैन साहित्य का इतिहास प्र थम भाग, वर्णी ग्रंथमाला ,वाराणसी

10 शास्त्री, लालाराम, आचाय ' श्री पूज्यपाद आदि विरचिता दशभक्त्यादि संग्रह प्रका-रावजी सखाराम दोशी सोलापुर 1933

11 शास्त्री परमानंद जैनधर्म का प्राचीन इतिहास भाग दो गजेंद्र पब्लिकेशंस दिल्ली

12 वही 8 पृ 7

13 पं. कैलाशचंदजी, जैन साहित्य का इतिहास, भाग 2, पृ 39-40

14 श्री भगवत् पुष्पदेत भूतवलि प्रणीत षट्खंडागम , सं.डॉ. हीरालाल (चार अन्य विद्वानों के नाम भी हैं) प्रकाशक-सेठ शितावराय लक्ष्मीचंद्र , अमरावती, 1949



राजमल जैन

एम. ए. (संस्कृत, हिंदी एवं राजनीति विज्ञान)

बी-1/324, जनकपुरी,

नई दिल्ली-110058